तिरुमल तिरुपति देवस्थान

सप्तगिरि

सचित्र मासिक पत्रिका

सितम्बर-2019 रु.5/-

तिरुमल

श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

दि. ३०-०९-२०१९ से दि. ०८-१०-२०१९ तक

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

२०१९, जुलाई १३, १४ को
भारत के राष्ट्रपति
श्रध्देय श्री रामनाथ कोविन्द ने
तिरुपति श्री कपिलेश्वरस्वामी का,
तिरुचानूर श्री पद्मावती देवी का,
तिरुमल श्री वराहस्वामी तथा
श्री वेंकटेश्वरस्वामी का
सपरिवार दर्शन किया।
उनके दृश्य प्रस्तुत हैं।

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा।
आचार्यमुपङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत्।।
(- श्रीमद्भगवद्गीता १-२)

सञ्जय बोले - उस समय राजा दुर्योधन ने व्यूहरचनायुक्त पाण्डवों की सेना को देखकर और द्रोणाचार्य के पास जाकर यह वचन कहा।

सर्ववेदमयी गीता सर्वधर्ममयो मनुः।
सर्व तीर्थमयी गंगा सर्व देव मयो हरिः।।
(- गीता मकरंद, गीता का प्रभाव)

गीता सब वेदों की परिपूर्ण रूपिणी है। मनु सर्व धर्ममय है। गंगा सब तीर्थों से परिपूरित है। विष्णु सर्व देवमय है।

तिरुमल यात्री इनको अवश्य ध्यान रखें

- ☑ तिरुमल-यात्रा के लिए निकलने के पूर्व अपने इष्ट अथवा कुलदेवता की प्रार्थना करें।
- ☑ भगवान श्री वेंकटेश्वर स्वामी के दर्शन करने के पूर्व श्री स्वामि पुष्करिणी में स्नान करें, श्री वराहस्वामीजी की पूजा करें।
- ☑ मंदिर के अंदर भगवान पर ही ध्यान केंद्रित करें।
- ☑ मंदिर के अंदर पूर्णतः मौन रहें तथा ''श्री वेंकटेशाय नमः'' का उच्चारण करें।
- ☑ तिरुमल के पास स्थित पापविनाशनम् तथा आकाशगंगा पवित्र तीर्थों में स्नान करें।
- ☑ तिरुमल में रहते समय हमारे रीति-रिवाजों, आचार-व्यवहारों का पालन करें।
- ☑ अपनी भेंट हुंडी में ही डालें।
- ☑ तिरुमल मंदिर के परिसरों को स्वच्छ रखें और पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रिक थैलियों को मात्र ही उपयोग करें।
- ☑ श्री बालाजी के दर्शन करते समय संप्रदाय वस्त्र धारण करना है।

तिरुमल यात्री इनको आचरण न करें, तो अच्छा होगा।

- ☒ अपने साथ कीमती आभूषण या अधिक नकद न रखें।
- ☒ भगवान के दर्शन के लिए मात्र ही तिरुमल पधारें, अन्य किसी उद्देश्य से नहीं।
- ☒ दर्शन के लिए जल्दबाजी न करें, क्यू लाइन में ही सक्रम जाने का प्रयत्न करें।
- ☒ मंदिर के आचार-व्यवहारों के अनुरूप मंदिर में प्रवेश निषिद्ध है, तो कृपया मंदिर को न आवें।
- ☒ तिरुमल में सभी फूल भगवान की पूजा के लिए है इसलिए पुष्पों का धारण न करें।
- ☒ पानी और बिजली को वृथा न करें।
- ☒ अपरिचितों को काटेज में प्रवेश न दें। चाबियों को उन्हें न सौंपें।
- ☒ पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रिक थैलियों के अलावा किसी अन्य प्लास्टिक थैलियों का उपयोग न करें।
- ☒ चार माडावीथियों में चप्पल धारण न करें।
- ☒ भगवान दर्शन और आवास के लिए धोखेबाज या दलाल से संपर्क न करें।
- ☒ फेरीवालों से नकली प्रसाद मत खरीदें।
- ☒ तिरुमल मंदिर के परिसरों में थूकना आदि असह्य कार्य न करें।
- ☒ सेलफोन, कैमेरा जैसी चीजें और आयुधों को मंदिर के अंदर न ले जायें।
- ☒ विविध राजकीय कार्यकलाप, सभायें, ब्यानर, रास्तारोक, हडताल आदि सप्तगिरियों पर निषेधित है।

तिरुमल में निषेधित कार्य

- ⃠ तिरुमल में धूम्रपान, शराब, मांसाहार आदि निषेधित है।
- ⃠ अन्य मतों का प्रचार न करें।
- ⃠ पशु, पक्षी का वध निषेधित है।
- ⃠ तिरुमल में जुआ, पासा आदि को खेलना या अन्य खेलों में धन को बाजी लगाना निषेधित है।
- ⃠ भिखमंगों का प्रोत्साहन न करें।
- ⃠ तिरुमल में प्रईवेट व्यक्तियों द्वारा केशखंडन या कल्याणकट्टाओं (क्षुरकशाला) को चलाना निषेधित है।
- ⃠ आवास को अनधिकारिक तौर पर देना या लेना मना किया गया है।

- कार्यनिर्वहणाधिकारी

सप्तगिरि

वेङ्कटाद्रिसमं स्थानं
ब्रह्माण्डे नास्ति किञ्चन,
वेङ्कटेश समो देवो
न भूतो न भविष्यति।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान की
सचित्र मासिक पत्रिका

वर्ष-५० सितम्बर-२०१९ अंक-०४

गौरव संपादक
श्री अनिलकुमार सिंघाल, आई.ए.एस्.,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति.ति.दे.

प्रधान संपादक
डॉ.के.राधारमण

संपादक
डॉ.वी.जी.चोक्कलिंगम

उपसंपादक
श्रीमती एन.मनोरमा

मुद्रक
श्री आर.वी.विजयकुमार, बी.ए., बी.एड्.,
उपकार्यनिर्वहणाधिकारी,
(प्रचुरण व मुद्रणालय),
ति.ति.दे. मुद्रणालय, तिरुपति।

श्री पी.शिवप्रसाद,
सेवानिवृत्त चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

स्थिरचित्र
श्री पी.एन.शेखर, छायाचित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।
श्री बी.वेंकटरमण, सहायक चित्रकार, ति.ति.दे., तिरुपति।

मुखचित्र
श्रीवारि गरुडोत्सव (तिरुमल)

चौथा कवर पृष्ठ
श्रीवारि रथोत्सव (तिरुमल)

विषयसूची

आदिवराह गोविंदा!!	डॉ.बी.के.माधवी	07
भगवान श्री गणेश की विशिष्टता	डॉ.टी.पद्मजारानी	09
ऋषि पंचमी	श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया	11
वामनावतार	डॉ.सी.आदिलक्ष्मी	13
श्री पोन्नडिक्काल जीयर	श्री भवरी रघुनाथदास रांदड	16
शरणागति मीमांसा	श्री कमलकिशोर हि. तापडिया	21
भागवत कथा सागर महाराज पृथु एक शक्त्यावेश अवतार	श्री अमोघ गौराँग दास	23
श्री रामानुज नूट्रंदादि	श्री श्रीराम मालपाणी	26
श्री प्रपन्नामृतम्	श्री रघुनाथदास रान्दड	31
आत्म-शक्ति को जानो	श्री अमोघ गौराँग दास	33
शरणागत वत्सल - श्री वेंकटेश	श्री पी.श्रीनिवासुलु	35
दिव्यक्षेत्र तिरुमल	श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण	40
''प्रभु प्राप्ति के लिये कलियुग में प्रेम की प्रधनता''	श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालिया	46
भजेहं - ज्येष्ठराजं	श्री वेमुनूरि राजमौलि	48
श्री प्रतिवादि भयंकरं अण्णनूस्वामीजी का जीवन चरित्र	श्रीकांची प्रतिवादि भयंकर श्रीनिवासाचार्य	49
राशिफल	डॉ.केशव मिश्र	53

सूचना

मुद्रित रचनाओं में व्यक्त किये विचार लेखक के हैं। उनके लिए हम जिम्मेदार नहीं हैं। *– प्रधान संपादक*

अन्य विवरण के लिएः
CHIEF EDITOR, SAPTHAGIRI, TIRUPATI - 517 507.
Ph.0877-2264543, 2264359, 2264360.

website: www.tirumala.org or www.tirupati.org
वेबसैट के द्वारा सप्तगिरि पढ़ने की सुविधा पाठकों को दी जाती है। सूचना, सुझाव, शिकायतों के लिए - sapthagiri_helpdesk@tirumala.org

जीवन चंदा .. रु.500-00
वार्षिक चंदा .. रु.60-00
एक प्रति .. रु.05-00
विदेशियों को वार्षिक चंदा .. रु.850-00

संपादकीय

ब्रह्मांडनायक का ब्रह्मोत्सव

तिरुमलगिरि पर स्वयंभू के रूप में विराजित श्री वेंकटेश्वर स्वामी जी का ब्रह्मोत्सव, बाकी सभी उत्सवों में से अत्यन्त विलक्षण, अद्भुत, महत्वपूर्ण तथा भव्य माना जाता है। यह ब्रह्मोत्सव एक प्रकार की विशेषता भी प्राप्त की।

उत् + सवं = उत्सवं। 'उत्' माने 'महान', 'सवं' माने 'यज्ञ'। विशेष रूप से इस महान यज्ञ को कई सालों तक दिन-रात बिना अंतराल के, चतुर्मुख ब्रह्मदेव से मनाये जाने के कारण इसका नाम 'ब्रह्मोत्सव' पडा।

यह ब्रह्मोत्सव लोकक्षेमार्थ, नित्यपूजाहीन प्रायश्चितार्थ, नित्य पूजा दोष प्रायश्चितार्थ, सर्व अशुभ निवारणार्थ किया करते है। इतना ही नही भगवान की मूलबिम्ब में (ध्रुवबेरम्) स्थित शक्ति की वृद्धि के लिए भी यह ब्रह्मोत्सव मनाते हैं। इसी को महोत्सव, तिरुनाल तथा कल्याणोत्सव भी कहते हैं।

यह सर्व साधारण विषय है कि- एक मन्दिर की महानता या महत्व, उससे आकर्षित होनेवाले यात्रिक संख्या समुदाय से, अथवा उसके विधिविधानों के ऊपर निर्भर होती है। यदि उस दृष्टि से देखे तो कह सकते है कि तिरुमल श्री वेंकटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सव, स्वामीजी की ख्याति के मुताबिक पीढियों से मनाई जा रही है।

हर साल ब्रह्मोत्सव मनायी जाती है। पूरा शहर उत्साहपूर्ण स्थिति से शोभायमान होती है। उस खुशी के माहौल में इतिहास को भूल जाना हमारा स्वभाव है। सभी कार्यों में, कल और आज में कितना अंतर है! कितने ही तबदीलियाँ है! सदियों से कई राजा, राणी स्वामीजी के ब्रह्मोत्सवों को बडी धूमधाम से करके, इतिहास में निक्षिप्त है। इससे पहले ब्रह्मोत्सव हर महीने मनाया जाता था। इस प्रकार साल में ग्यारह ब्रह्मोत्सव होते थे। आज भी ब्रह्मोत्सवों का निरंतर आगे बढने का मुख्य कारण उनके दीक्षा-दक्षत ही है। अनादिकाल से कई महानुभावों ने बहुत मुश्किलों का सामना करते हुए, स्वामीजी का ब्रह्मोत्सव मनाते आये। ब्रह्मोत्सव के कीर्तिपताक को पूरे संसार में बडे गर्व के साथ लहराया।

इस प्रकार, उस जमाने में होनेवाले ये ब्रह्मोत्सव, वर्तमान में स्वामीजी के एक ही ब्रह्मोत्सव के रूप में, वह भी पेरटासी के महीने में (सितंबर-अक्तूबर) साक्षात् भगवान ब्रह्माजी के द्वारा प्रारंभ किया गया है, ऐसा बताया जानेवाले यह ब्रह्मोत्सव, स्थायी रूप से आज भी मनाया जाना, अत्यन्त विशिष्ट एवं अपुरूप माना जाता है। इस प्रकार तब से लेकर आज तक श्रीवारि के उत्सवों में ब्रह्मोत्सव का अत्यन्त वरीयता प्राप्त है। ऐसे ब्रह्मोत्सवों का दर्शन करके स्वामीजी की सेवन करनेवाले को पुनर्जन्म प्राप्त नही होता। उसी प्रकार वाहन सेवाओं का दर्शन भी मुक्ति प्रदायक है।

शेषवाहन-कुटुम्बश्रेयस्, हंसवाहन-ब्रह्मपद प्राप्ति, सिंहवाहन-धैर्य सिद्धि, मोतीवितानवाहन-सकल सौभाग्य सिद्धि, कल्पवृक्षवाहन-ऐहिक आमुष्मिक फल प्राप्ति, सर्वभूपालवाहन-यशो प्राप्ति, मोहिनी अवतार-माया मोह नाशन, गरुडवाहन-सर्वपाप प्रायश्चितम्, हनुमंतवाहन-भगवद् भक्ति की प्राप्ति, गजवाहन-कर्म विमुक्ति, सूर्यप्रभावाहन-आयुरारोग्य प्राप्ति, चन्द्रप्रभावाहन-मानसिकशांति की प्राप्ति, रथोत्सव-मनोवांछाफल प्राप्ति, अश्ववाहन-कलि कल्मश नाशन्, चक्रस्नान-सकल पाप विमोचन।

इत्यादि शुभ परिणाम मिलते हैं, ऐसा पुराणों का कहना है। इसीलिए इन सभी सेवाओं में, सारे भक्तजन भाग लेकर, स्वामी के कृपा पात्र बनें, ऐसा 'सप्तगिरि' आप सबसे प्रार्थना कर रही है।

आइये! **ब्रह्मोत्सव का दर्शन कीजिये!!** **पुनीत बनजाइये!!!**

आदिवराह गोविंदा!!

(श्री वराहस्वामी मंदिर, तिरुमल)

तेलुगु मूल - श्री मुद्दुकृष्णय्या उपाद्याय

हिन्दी अनुवाद - डॉ.बी.के.माधवी

वैकुंठ को छोडकर आये भगवान श्रीनिवास जंगल में एक बिल में रहने लगा। इस प्रकार, एक दिन बिल में से बाहर आकर विहार करने लगा। उस समय दूर से आते हुए वराहस्वामी अपने परिवार के साथ आते दिखाई पडा। डर कर तुरंत बिल में घुस गया।

वराहस्वामी भी श्रीमन्नारायण ही है। दोनों अवतारों में यहाँ वेंकटाचल पर रहता था। वराहस्वामी ने राक्षसों के हाथों में से पृथ्वी की रक्षा करने के बाद इसी पर्वत पर अपना निवास स्थान बनवालिया। इसीलिए इस पर्वत को 'वराहचलम्' नाम स्थिर हुआ। शमीकधान्य फसल की सिंचाई अपने परिवार के साथ करते हुए यही रहनेवाले वराह उस शमीकधान्य का अपहरण करने के लिए आये दैत्यों का संहार करके, अपने परिवार के साथ वापस आ रहा था।

उस समय वराहस्वामी ने श्रीनिवास भगवान को देख लिया। वराहस्वामी श्रीनिवास के पास जाकर बिल में से बाहर आने के लिए कहा। तब श्रीनिवास ने बाहर आया। उन दोनों भगवद्रूपसमागमं महाविशेष था। एक ही व्यक्ति दो रूपों में रहकर एक ही प्रदेश में मिलकर प्रश्नोत्तरों से संभाषण करना महाविशेष है। तब श्रीनिवास ने वराहदेव से पूछा कि- ''मुझे रहने के लिए १०० कदमों का स्थल चाहिए।'' तब वराहस्वामी ने कहा कि- ''मूल्य के बिना नहीं दे सकता।''

इससे श्रीनिवास ने कहा कि-- ''मेरे पास देने के लिए कुछ नहीं है, लेकिन भविष्य में करोडों भक्तजन मेरे दर्शन के लिए आयेंगे। वे तिरुमल आने पर पहला दर्शन तुम्हारा है बाद का दर्शन मेरा है। पहला अभिषेक तुमको, तुम्हारे बाद मुझको। नैवेद्य भी पहले तुम्हें और बाद में मुझे।'' इससे संतुष्ट होकर आदिवराहस्वामी ने १०० फूट(कदम) स्थल श्रीनिवास को दिया था। इन दोनों का संभाषण हमें मार्गनिर्देशन देने के लिए है। वराह और श्रीनिवास दोनों एक ही है। अलग-अलग तो नहीं है। ये श्रीमन्नारायण के दो रूप ही है।

श्री वराह जयंती (०१.०९.२०१९) के संदर्भ में...

हम सोचते है कि यह जगह मेरा है, यह मैं अपने पैसों से खरीद लिया, यह मेरा पित्रार्जित है, यह मेरा घर है, इसे मैंने बनवाया था इस प्रकार के भ्रम में थे। लेकिन सोचना है कि- सारे पृथ्वी भगवान का ही है, वराहस्वामी का ही है। इस भूमंडल को समुंदर से, राक्षसों से रक्षा करके हमारे निवास के लिए अनुकूल बनाये गये भगवान ही वराहस्वामी है।

उस परमात्मा के द्वारा दिये गये पृथ्वी पर हम जी रहे हैं। इसका स्मरण रहे तो अच्छा है। श्रीनिवास ने भी वराहस्वामी को धन कुछ भी नहीं दिया। श्रीनिवास ने यही कहा था कि पहले अभिषेक, पूजा, नैवेद्य वराहस्वामी को है, बाद में उनको कहा है। हमारे विषय में भी यही है। यह भगवान का है। हम केवल यही सोचकर जीना है कि- भगवान ने हमें जीने का अवकाश दिया है, इसी अनुसंधान से जीना है। सुबह स्नान करते समय पहले मृत्तिका स्नान करना है, ऐसे करते समय 'वराहदेव का स्मरण करना है।' यही शास्त्र है। खाद्यपदार्थ स्वामी को पहले निवेदन करके उसके बाद नैवेद्य समर्पण करनी है। पहले नैवेद्य तुम्हें है इसका मतलब यही है। नैवेद्य समर्पण करनी पर उसमें सार

लेकर आहार में दोष परिहार करता है स्वामी। यही इसमें रहे अंतरार्थ है।

इसके बाद श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने उस क्षेत्र में अपने प्राबल्य को बढा दिया। अब उस दिन के नियम के अनुसार ही आज भी तिरुमल में श्री भूवराहस्वामी को पहले पूजानिवेदनादि कार्यक्रम ठीक तरह से चल रहा है। इस वराहस्वामी का दर्शन पहले करने पर ही श्री वेंकटेश्वर स्वामी भी बहुत खुश होता है।

इस वराहस्वामी के बारे में प्राचीन शासनों में अधिक नहीं होने पर भी ई.स.१३८० के शासनों में श्री वराहस्वामी **'वराहनायनार्'** के रूप में बताये गये हैं। उसके बाद १४७६ के शासन में इस वराहस्वामी **'ज्ञानप्पिरान्'** के रूप में बताये गये हैं।

श्री वराहस्वामी को हर दिन तीनों पहरों में वैखानस आगमों के प्रकार अर्चन, निवेदन किये जा रहे हैं। सारे नैवेद्य भी श्री वेंकटश्वर स्वामी के पहले ही भी श्री वराह स्वामी को निवेदित किये जा रहे हैं। हर शुक्रवार प्रातःकाल अभिषेक किये जाते हैं।

मंदिर की निर्माण शैली

स्वामिपुष्करिणी के वायुव्य दिशा में पूरब की दिशा में आगे की ओर आने के जैसे वराहस्वामी मंदिर का मुखमंटप, अर्थमंटप, अंतराल, गर्भालय जैसे चार भागों में निर्मित किया गया है। शिल्प शोभित रमणीय खंभों से निर्मित श्री वराहस्वामी मंदिर के मुख मंटप में हर ब्रह्मोत्सव के अंतिम दिन, श्रवणा नक्षत्र के दिन **'चक्रस्नान'** के संदर्भ में श्रीदेवी-भूदेवी समेत श्री वेंकटेश्वर, चक्रत्ताल्वार के साथ पधारते हैं। इस मुखमंटप के आवरण में ही श्री वराहस्वामी मंदिर की एक परिक्रमा मार्ग है।

मुख मंटप से अंदर प्रवेश करने पर अर्थमंटप रहता है। यही वराहस्वामी गर्भालय के सभी ओर निर्माण करके परिक्रमा मार्ग के रूप में भी चालू है। अर्थमंटप से थोडा अंदर जायेंगे तो छोटा अंतराल है। इस अंतराल के बाहर द्वार के दोनों ओर शंखचक्र गदाधार जय विजय हैं। इनको लाँघ कर अंदर प्रवेश करेंगे तो पाँच-छः फूटों का चतुरस्र अंतराल है। इस अंतराल के गर्भालय में श्री भूवराहस्वामी विग्रह दो फूट ऊँचाई में है। ऊपर के दो हाथों में शंख-चक्र, बाये के जाँघ पर भूदेवी को बिठाकर रहने की प्रतिमा दिखाई देता है। इस मूलमूर्ति के साथ एक फूट ऊँचाई में पंचलोह वराहमूर्ति करीब उसी ऊँचाई में श्री वेंकटेश्वर का पंचलोहमूर्ति, थोडे सालग्राम है।

२०१९, अप्रैल २३ से २७ तक इस मंदिर में महासंप्रोक्षण कार्यक्रम अत्यंत वैभव के साथ किया गया है। इस प्रकार तिरुमल क्षेत्र में विराजमान पहले पहल देवता भी वराहस्वामी है। इसीलिए **'तिरुमल'** आदिवराह क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। इसलिए इतनी प्रसिद्धि, प्राशस्त्य रहे श्री वराहस्वामी का दर्शन पहले करके केवल श्री वराहस्वामी के आशीस ही नहीं बल्कि श्री वेंकटेश्वर स्वामी के आशीस भी पाकर कृतार्थ बन जायेंगे।

भगवान श्री गणेश की विशिष्टता

- डॉ.टी.पद्मजारानी

हम हिन्दू लोग अनेक त्यौहार मनाते है। हर वर्ष हम अनेक त्यौहार या पर्वदिन मनाते है। उनमें 'श्री गणेश चतुर्थि' या 'विनायक चविति' नाम से एक विशिष्ट त्यौहार हम मनाते है।

उस विशिष्ट दिन की विशेषता यह है कि भगवान श्री गणेश का जन्म इसी दिन हुआ। माता पार्वति ने एक भाद्रपद मास के शुद्ध चविति या चतुर्थि का दिन मूँग के आटे का उबटन से एक प्रतिमा बनाकर उस को जीव देती है। और उस बालक को अपने अभ्यंतर मंदिर के बाहर खडे होकर अंतःपुर की रक्षा करने के लिए नियुक्त करती है।

माता पार्वति स्नान करने के लिए अंदर गयी। बाहर खडा था विनायक। उसी समय भगवान शिव ने उधर पहुँचा। गणेश उन को भी अंदर जाने नहीं दिया। भगवान शिव ने तरह तरह विधों से उस बालक को धमकाया और अंदर जाने नही देने के कारण क्रोध से उस बालक के सिर काटा था। बस वह बालक मारा गया। माता पार्वति को यह बात मालुम हुयी। उस माता ने बहुत क्रोध से शिव पर अपना क्रोध प्रकट की। अपनी नारी के क्रोध को देख कर पार्वति से विनायक का समाचार और उस का जन्म वृत्तांत को मालुम होकर अपनी बाधा व्यक्त किया। और शिव ने उस मरे हुये बालक को फिर प्राण देने के लिए अपने अनुचरों को उत्तर दिशा में सिर रख कर सोने वाले किसी एक जीव के शिर को काट कर लाने की आज्ञा दी।

आखिर भगवान शिव ने एक उत्तर दिशा में सिर रख कर सोने वाले गजेन्द्र के शिर को पाकर उस सिर को उस मरे हुये बालक के शिर तैयार किया। और उसे प्राण भी दिया। तुरंत उस बालक नींद से उठाने की तरह उठा। पार्वति की बातों से संतुष्ट होकर भगवान शिव उस बालक को अपना बालक मानने को सिद्ध हुआ। और उस विनायक को अपने प्रमथ गणों की अधिपति कालांतर में बनाया।

श्री गणेश चतुर्थि (०२.०९.२०१९) के संदर्भ में...

एक बार भगवान शिव और माता पार्वती देवी ने अपने पुत्र विनायक और कुमारस्वामी या सुब्रह्मण्य स्वामी को समस्त लोक का भ्रमण करके आने की परीक्षा की और उस परीक्षा में इस दुनियाँ को कौन भ्रमण करके पहले अपने माँ-बाप के पास आएगा उस बालक को हम 'गणाधिपति' बनेंगे। इस परीक्षा में मोर को वाहन बनाकर उस पर सवार होकर भगवान सुब्रह्मण्य ने समस्त लोकों को घूमकर आया। लेकिन बलहीन विनायक तीन बार भक्ति से अपना पिता भगवान शिव और माता पार्वती देवी का प्रदक्षिण

करके उन्हे प्रणाम किया। केवल माँ-बाप की सेवा करने से वे गणाधिपति बन गये।

विनायक को अनेक नाम है। एक है विनायक, गणपति, विघ्नेश आदि इस विनायक के वृत्तांत को सुनने से हमे यह बात मालुम होता है कि अपने माँ-बाप को भगवान समझकर जिस व्यक्ति उनकी सेवा करता है उसी को इस दुनिया में दुर्लभ सुख भी मिलता है।

विनायक से या गणेश या गणाधिपति या विघ्नेश से हमे यह बात मालुम होता है कि मात्रु देवो भव, पित्रु देवो भव और आचार्य देवो भव, अतिथि देवो भव नाम को जिस व्यक्ति अपने जीवन में मन से तन से और बात से साबित करता है उस व्यक्ति को हम पूजा करते है। उसको ही हम भगवान मानते है।

'शुक्लां बरधरम विष्णुं
शशि वर्णम चतुर्भुजं
प्रसन्न वदनम ध्यायेत
सर्व विघ्नोप शांतये।'

इस श्लोक को पढने से ही हम भगवान गणेश को पहले स्मरण करके पूजा करते है। पूजा के आरंभ में गणेश की पूजा करना अनिवार्य है। और भगवान गणेश आशीर्वाद पाना है। मानव को प्रधान है। गणाधिपति होने के कारण भगवान गणेशजी को प्रथम पूजा मिल गया। यह शिव से प्रसादित वर है। कौन इस गणपति की पूजा तन मन धन से करता है वह आदमी उत्तम मानव बन जाता है। अर्थात पूजा के प्रारंभ में गणेश की पूजा अनिवार्य है।

इसलिए हम गणेशजी के जन्म दिवस को भाद्रपद शुद्ध चविति का दिन 'विनायक चविति' या 'गणेश चतुर्थि' मनाते है। किसी कार्य को हम शुरू करना चाहते है उस कार्य को शुरू करने के पहले ही भगवान गणेश महाराज की पूजा करना अनिवार्य और शुभ दायक है और सारे विघ्नों को हटाकर उस पूजा से संतुष्ट होकर गणेश के आशीर्वाद देता है।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति।

'सप्तगिरि', 'स्वर्ण जयंती पत्रिका विशेष' में आलेखों का स्वागत!!

तिरुमल तिरुपति देवस्थान का आध्यात्मिक सचित्र मासिक पत्रिका 'सप्तगिरि' है। कलियुग प्रत्यक्ष दैव श्री वेंकटेश्वर भगवानजी के वैभव एवं तिरुमल क्षेत्र की महानता को हर महीने 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका पाठकों को आलेखों के माध्यम से पहुँचाता है। छः भाषाओं में मुद्रित यह पत्रिका आध्यात्मिक, धार्मिक पत्रिकाओं में विशिष्ट स्थान पायी है।

यह पत्रिका जिज्ञासुओं, महिलाओं व बच्चों... जैसे सभी उम्रवालों के लिए उपयुक्त बनी है। कालप्रवाह में अभिवृद्धि की ओर कदम रखते हुए है। 'सप्तगिरि' मासिक पत्रिका के पाठकों से विनती है कि ''सप्तगिरि पत्रिका को पढ़ने के बाद की अनुभूतियाँ व अनुभव एक लेख के रूप में हमारे कार्यालय में भेजें। उनका परिशीलन करके 'सप्तगिरि' में प्रकाशित किया जाएगा।

आपका लेख अगर डाक से भेजना हो, तो - 'प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, ति.ति.दे. प्रेस कांपौंड, के.टी.रोड, तिरुपति-५१७ ५०७' के पते पर भेजने का कष्ट करें।

हिन्दी में डी.टी.पी. करके मेइल से भेजने के लिए- पेज मेकर अनु-फांट्स में या एम.एस.वर्ड में युनिकोड फांट में भी टैप करके फैल के साथ पी.डी.एफ. फैल भी hindisapthagiri50years@gmail.com मेइल आई.डी. के द्वारा भेज दें।

ऋषि पंचमी

- श्रीमती प्रीति ज्योतीन्द्र अजवालिया

हमारी भारतीय संस्कृति में एक-एक दिन का एक-एक महत्व है। ऐसा ही पवित्र दिन ऋषि पंचमी का अनुसंधान करने जा रहे है। ऋषि पंचमी का महत्व हिन्दु धर्म में बहुत अधिक माना जाता है। दोषों से मुक्त होने के लिये इस व्रत का पालन किया जाता है। इस व्रत में सप्तऋषि की पूजा की जाती है, खास करके हिन्दु धर्म में माहवारी के समय बहुत से नियम और कायदा को माना जाता है। अगर गलती वश इस समय कोई भूल हो जाती है, तो महिला को दोष से मुक्त होने के लिये यह व्रत किया जाता है।

ऋषि पंचमी व्रत कथा

एक समय की बात है। एक समय राजा सिताश्व धर्म का अर्थ जानने की इच्छा से ब्रह्माजी के पास गये और उनके चरणों में शीश झुकाकर बोले, हे आदिदेव आप समस्त धर्मों के प्रवर्तक और गूढ धर्मों को जाननेवाले है। आप के मुख से धर्म चर्चा श्रवण कर मन को आत्मिक शांति मिलती है। भगवान के चरण कमलों में प्रीति बढती है। वैसे तो आपने मुझे नाना प्रकार के व्रतों के बारे में उपदेश दिये है। अब मैं आप के मुखारविन्द से उस श्रेष्ठ व्रत को सुनने की अभिलाषा रखता हूँ, जिस के आचरण से प्राणियों के समस्त पापों का नाश हो जाता है।

राजा के वचन को सुनकर ब्रह्माजी ने कहा है, हे श्रेष्ठ तुम्हारा प्रश्न अति उत्तम है और धर्म में प्रीति बढानेवाला है। मैं तुमको समस्त पापों का नष्ट करनेवाला सर्वोत्तम व्रत के बारे में बताता हूँ। यह व्रत 'ऋषि पंचमी' के नाम से प्रचलित है। इस व्रत का अनुसरण करनेवाला प्राणी अपने समस्त पापों से सहज छुटकारा पा लेता है।

ऋषि पंचमी (०३.०९.२०१९) के संदर्भ में...

कथा इस प्रकार है। विदर्भ देश में उत्तंक नामक एक सदाचारी ब्राह्मण रहता था। उसके पत्नी बडी पतिव्रता थी, जिसका नाम सुशीला था। उस ब्राह्मण को एक पुत्र और एक पुत्री दो संतान थी। विवाह योग्य होने पर उसने समान कुलशील वर के साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया। देवयोग से कुछ दिनों बाद ये कन्या विधवा हो गई। दुःखी ब्राह्मण दंपति अपनी कन्या सहित गंगा तट पर कुटिया बनाकर रहने लगा।

एक दिन ब्राह्मण कन्या सो रही थी कि उसका शरीर कीडो से भर गया। कन्या ने ये बात माँ को बताई। माँ ने पति से सब बाते कहते हुए पूछा की प्राणनाथ, मेरी विधवा कन्या की यह गति होने का क्या कारण है?

उत्तंक ने समाधि द्वारा घटना का पता लगाकर बताया। पूर्व जन्म में भी यह कन्या ब्राह्मणी थी। इसने रजस्वला होते ही बर्तन छुकर और रसोई का भी काम किया था। इस जन्म में भी इसने लोगों की देखा देखी से ऋषि पंचमी का व्रत नही किया। इसलिये इस के शरीर में कीडे पडे है।

यदि यह शुद्ध मन से अब भी ऋषि पंचमी का व्रत करे तो इसके सारे दुःख दूर हो जायेंगे और अगले जन्म में अटल सौभाग्य प्राप्त करेगी।

पिता की आज्ञा से पुत्री ने विधिपूर्वक ऋषि पंचमी का व्रत एवं पूजन आदि किया। समय बीतने पर व्रत के प्रभाव से वह सारे दुःखों से मुक्त हो गई। अगले जन्म में उसे अटल सौभाग्य सहित अक्षय सुखों का भोग मिला।

ऋषि पंचमी का व्रत सभी वर्ग की स्त्रियों को करना चाहिये।

ऋषि पंचमी व्रत पूजा विधि

व्रत हेतुक स्त्रियाँ प्रातः सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नान करना चाहिये। स्वच्छ शुद्ध वस्त्र धारण करना चाहिये। घर के पूजा घर में गोबर से चोक पुरकर इस पर सप्तऋषि बनाकर उन की पूजा आराधना करने का विधान है। बाजठ पर अन्न का आसन बनाकर उस पर कलश स्थापन करना चाहिये। सप्तऋषि और भगवान को धूप-दीप, नैवेद्य, पंचोपचार अर्पण करके इस व्रत कथा का अनुसंधान करना चाहिये। जब तक महिला रजस्वला धर्म में आती है उस उम्र तक भाद्रपद शुक्ल पंचमी (ऋषि पंचमी) को यह व्रत जरूर करना चाहिये। माहवारी के चले जाने (रजस्वला धर्म की आयु खत्म होनेपर) पर इस व्रत का उद्यापन किया जाता है। अर्थात् वृद्धावस्था में ऋषि पंचमी व्रत का उद्यापन किया जाता है।

ऋषि पंचमी व्रत उद्यापन विधि

• विधिपूर्वक पूजा आराधना कर के इस दिन ब्रह्म भोजन करवाया जाता है।

• सात ब्राह्मण को सप्तऋषि का रूपक मानकर उन्हें पूरी तरह से भोजन आदि करवा के दान दे के संतुष्ट करने का विधान है।

कहा जाता है कि महाभारत काल में उत्तरा के गर्भ पर अश्वत्थामा ने प्रहार किया था इसलिये गर्भ नष्ट हो गया था। इस कारण उत्तरा ने पापमुक्त होने के लिये ऋषि पंचमी का व्रत आदि किया, व्रत के प्रभाव से उनका गर्भ पुनःजीवित हुआ और हस्तिनापुर का राजा परीक्षित के रूप में उत्तराधिकारी मिला। राजा परीक्षित अभिमन्यु और उत्तरा के पुत्र थे। पुनःजन्म मिलने के कारण इन्हे गर्भ में ही द्वीज कहा गया था। इस तरह इस व्रत के पालन से उत्तरा गर्भपात दोष से मुक्त हुई और सुपुत्र को पुनःप्राप्त किया।

इस प्रकार दोषों की मुक्ति के साथ-साथ संतान प्राप्ति एवं सुख सुविधा की प्राप्ति, सौभाग्य के लिये इस व्रत का पालन सभी वर्ग की स्त्रियों को करना चाहिये।

यह व्रत जीवन की दुर्गति को समाप्त कर पापमुक्त जीवन देता है।

॥ जय श्रीमन्नारायण ॥

श्री वेंकटेश्वर परब्रह्मणे नमः

हिन्दू होने के नाते गर्व कीजिए!

* ललाट पर अपने इच्छानुसार (चंदन, भस्म, नामम्, कुंकुम) तिलक का धारण करें।
* नहाने के बाद निम्न भगवन्नामों से किसी न किसी का एक पर्याय में १०८ बार जप करें।

श्री वेंकटेशाय नमः।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो नारायणाय।

वामनावतार

- डॉ.सी.आदिलक्ष्मी

श्रियं सरस्वतीं गौरीं गणेशं स्कन्दमीश्वरम्!
ब्रह्माणं वह्निमिन्द्रादीन् वासुदेवं नमाम्यहम्!!

लक्ष्मी, सरस्वती, पार्वती, गणेश, कार्तिकेय महादेव जी ब्रह्म, अग्नि, इन्द्र आदि देवताओं तथा भगवान वासुदेव को मैं नमस्कार करता हूँ। नैमिषारण्य की बात है। शौनक आदि ऋषि यज्ञों द्वारा भगवान विष्णु का यजन कर रहे थे। उस समय वहाँ तीर्थयात्रा के प्रसङ्ग से सूजती पधारे। महर्षियों ने उनका स्वागत सत्कार करके कहा - सूतजी! आप हमारी पूजा स्वीकार करके हमें वह सार से भी सारभूत तत्त्व बतलाने की कृपा करें, जिसके ज्ञान लेनेमात्र से सर्वज्ञता प्राप्त होती है। सूतजी ने कहा-ऋषियो! भगवान विष्णु ही सार से भी सारतत्व है। वे सृष्टि और पालन आदि के कर्ता और सर्वत्र व्यापक है। वह विष्णुस्वरूप ब्रह्म मैं ही हूँ। इस प्रकार उन्हे जान लेने पर सर्वज्ञता प्राप्त हो जाती है। ब्रह्म के दो स्वरूप जानने के योग्य है - शब्दब्रह्म और परब्रह्म। दो विद्याएँ भी जानने के योग्य है - अपरा विद्या और परा विद्या। यह अथर्ववेद की श्रुति का कथन है। एक समय की बात है, मैं शुकदेवजी तथा पैल आदि ऋषि बदिरिकाश्रम को गये और वहाँ व्यासजी को नमस्कार करके हमने प्रश्न किया। तब उन्होने हमें सारतत्व का उपदेश देना आरम्भ किया। व्यासजी बोले - सूत! तुम शुक आदि के साथ सुनो! एक समय मुनियों के साथ मैंने महर्षि वसिष्ठजी से सारभूत परात्पर ब्रह्म के विषय में पूछा था। उस समय उन्होने मुझे जैसा उपदेश दिया था, वही तुम्हे बता रहा हूँ। वसिष्ठजीने कहा - व्यास! सर्वान्तर्यामी ब्रह्म के दो स्वरूप है। मैं उन्हे बताता हूँ सुनो! पूर्वकाल में ऋषि-मुनि तथा देवताओं सहित मुझसे अग्निदेव ने इस विषय में जैसा, जो कुछ भी कहा था, वही मैं तुम्हे बता रहा हूँ। अग्निदेव बोले-वसिष्ठ मैं ही विष्णु हूँ, मैं ही कालग्निरुद्र कहलाता हूँ मैं तुम्हे सम्पूर्ण विद्याओं की सारभूता विद्या का उपदेश देता हूँ, जिसे अग्निपुराण कहते है। वही सब विद्याओं का सार है, वह ब्रह्मस्वरूप है। सर्वमय एवं सर्वकारणभूत ब्रह्म उससे भिन्न नही है। उसमें सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर, वंशानुचरित

श्री वामन जयंती (१०.०९.२०१९) के संदर्भ में...

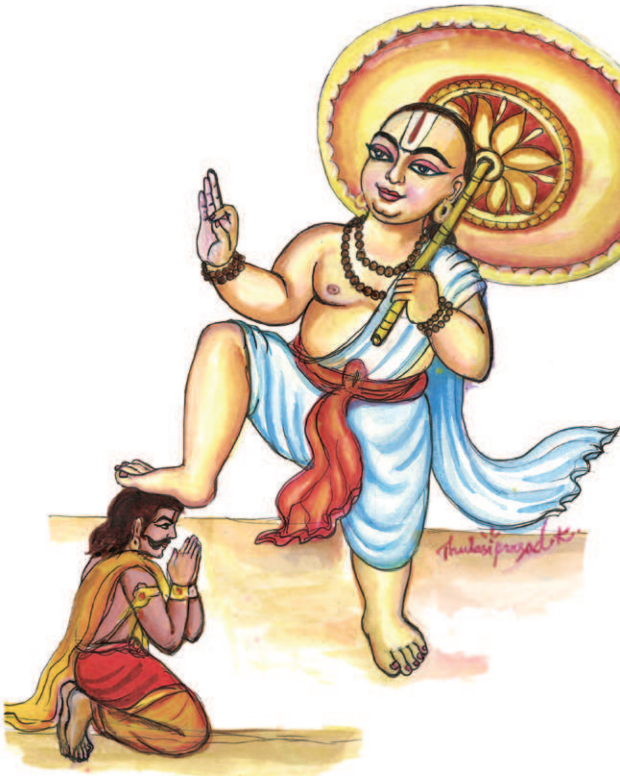

आदि का तथा मत्स्य, कूर्म आदि रूप धारण करनेवाले भगवान का वर्णन है। ब्रह्मन्! भगवान विष्णु की स्वरूपभूता दो विद्याएँ हैं एक परा और दूसरा अपरा। ऋक्, यजुः, साम और अथर्व नामक वेद, वेद के छहों अङ्ग-शिक्षा कल्प, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छंदः शास्त्र तथा मीमांसा, धर्मशास्त्र, पुराण, न्याय, वैद्यक (आयुर्वेद), गान्धर्व वेद (संगीत) धनुर्वेद और अर्थशास्त्र - यह सब अपरा विद्या है तथा परा विद्या वह है जिससे उस अदृश्य अग्राह्य, गोत्ररहित, चरणरहित, नित्य, अविनाशी ब्रह्म का बोध हो।

आद्यं पुरुषमीशानं पुरुहूतं पुरुष्टुतम्!
ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातनेम्!!
असच्च सदासच्चैव यद्विश्वं सदासत्तरम्।
यरावराणां स्रष्टारं पुराणं परमव्ययम्।
मंगल व्यापक विष्णुं वरेण्यमनघं शुचिम्।
नमस्कृत्य हृषीकेशं चराचरगुरुं हरिम्।

हे शौनक जी - जो शुद्ध, चैतन्य स्वरूप एवं आदि पुरुष थे, जो ईशान, पुरूहुत, ऋत एक, अक्षर, ब्रह्म व्यक्त एवं अव्यक्त सनातन है। असत् एवं सत् है। अथवा जो सत और असत से परे हैं जो शिव रूप है, जो पर और अपरा से स्रष्टा तथा परम अविनाशी है। जो मंगलदायक, मंगलमूर्ति सर्वव्याप्त वरेण्य और दोषरहित है जो स्वभावतः शुद्ध इन्द्रियों को प्रवर्तक, अखिल जगत के उपदेष्टा और सभी पापों के नाशक हैं उन भगवान ऋषिकेश को नमस्कार करते हुए अपने प्रतिपाद्य विषय को कहता हूँ। यह कथा भरतवंशी जनमेजय के अनुरोध पर वैशम्पायन् जी ने वृष्णि एवं अंधकवंशियों के श्रेष्ठ चरित्र को कहा था। वैशम्पायन जी ने जनमेजय से कहा - हे राजन् जो चरित्र मैं आपको सुनाने जा रहा हूँ। यह निश्चय ही दिव्य पापविनाशक तथा अनेक अर्थ से युक्त है। इस कथा को बार-बार प्रेमपूर्वक सुनकर हृदयंगम कर लेने से वंश दृढ होता है और स्वर्ग में भी पूजने योग्य होता है। जो अव्यक्त कारण नित्य, सदसदात्मक एवं प्रधान पुरुष है, उसी से ईश्वरीय संसार की उत्पत्ति हुई है। अतएव हे राजन् उन्ही अव्यक्त पुरुष को अभिन्न तेज सम्पन्न सब जीवों का सृष्टा और नारायण समझो। उसी महान ब्रह्म से अहंकार उत्पन्न हुआ है। अहंकार से आकाश आदि सूक्ष्म जीव तथा सूक्ष्मजीवों से पंचतत्व और जरायुज आदि चार प्रकार के जीवों की उत्पत्ति हुई, इसी को सनातन सृष्टि कहा जाता है। अब सम्पूर्ण विश्व सृष्टि का पूर्ण वृत्तांत सुना रहा हूँ। जिसके कीर्तन करने और श्रवण करने से धन तथा यश की वृद्धि होती है। शत्रुओं का नाश होता है, आयु बढ़ती है और अन्त में स्वर्ग की प्राप्ति होती है। भगवान ने सर्वप्रथम जीवों को प्रकट करके अनेक प्रकार की भौतिक प्रजा को उत्पन्न करने का विचार किया। अतः सर्वप्रथम प्रभु ने जल की उत्पत्ति करके

उसमें अपना वीर्य डाल दिया। वह वीर्य हिरण्य वर्ण का अण्ड स्वरूप हो गया। उस अण्डे से स्वयम्भू कहे जाने वाले ब्रह्माजी की उत्पत्ति हुई। ब्रह्माजी ने अण्डे में एक वर्ष तक निवास करने के पश्चात् उसे दो खण्डों में विभाजित कर दिया। जिसके एक खण्ड से पृथ्वी तथा दूसरे खण्ड से देवलोक की रचना की। उन दोनों खण्डों के मध्य आकाश की रचना कर पृथ्वी को जल पर स्थापित कर दिया, फिर सूर्य और दशों दिशाओं की रचना की। उसी अण्ड में रति विषय प्रीति के रहित पिण्ड सृष्टि की रचना के विस्तार से काल, मन, वचन, काम, क्रोध एवं अनुराग की रचना की। फिर ब्रह्माजी ने अपने मन से मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु एवं वशिष्ठ इन सप्तऋषियों को प्रकट किया। इन सप्तऋषियों ने अपने को गृहस्थ ब्राह्मण माना तथा ब्रह्माजी के द्वारा ही उत्पन्न सनकादि ऋषियों की अवहेलना कर वेद मार्ग को ही श्रेष्ठ समझा। फिर ब्रह्माजी ने परम क्रोधी रुद्र को उत्पन्न किया तथा मरीचि आदि के पूर्वजों ने सनत कुमार की उत्पत्ति की। सप्तऋषियों ने तथा रुद्र ने सन्तानें उत्पन्न कीं।

वैशम्पयान जी ने जनमेजय से श्रीकृष्ण की कथा सुनाते हुए कहा - हे राजन्! तुम्हारी इस अभिलाषा को भगवान विष्णु अपनी दिव्य देह को त्यागकर तथा देवलोक का मोह त्याग कर पृथ्वी पर वासुदेव के यहाँ क्यों अवतरित हुए? मैं इसके विषय में सुनाता हूँ। जो कि सबके लिए हितकारी व मंगलकारी है। परमपिता परमेश्वर सभी प्राणियों के आत्मा हैं तथा देवताओं व मनुष्यों की भलाई हेतु दुष्ट दलन हेतु बार-बार अवतरित होते हैं। भगवान का जो रूप देवलोक में निवास कर सदा तप में लीन रहता है वह सात्विक है तथा जो रूप पृथ्वी पर अवतरित होता है वह तात्विक कहलाता है। तथा जो मूर्ति सृष्टि के संहार के लिए योगनिद्रा के आश्रित रहती है वह तामसी मूर्ति कहलाती है। योगनिद्रा रूपी आश्रय में भगवान एक हजार वर्ष तक शयन करने के पश्चात पुनः सृष्टि के निर्माण में लग जाते हैं। उस समय ब्रह्म सभी लोकपाल सूर्य, चन्द्र, अग्नि, कपिलमुनि सप्तर्षि, त्र्यम्बक, वायु चारों समुद्र सनत कुमार और प्रजापालक मनु उन भगवान से ही पैदा होते हैं। तथा पुराण पुरुष ग्राम नगर आदि की रचना करते हैं। एक हजार युग बीतने पर फिर वह सृष्टि भगवान के देह में पूर्ण विलीन हो जाती है। सभी के नष्ट होने पर केवल दो दैत्य मधु-कैटभ भगवान विष्णु से युद्ध हेतु रह जाते हैं। प्रभु उन्हे मोक्षप्राप्ति का वरदान देकर समुद्र में नष्ट कर देते हैं।

वामनावतार

राजा बलि के कारण भगवान विष्णु ने वामन रूप धारण कर अपने पैरों से तीन पग में ही सारी पृथ्वी को नाप कर सभी दैत्यों व राक्षसों में भय उत्पन्न कर दिया था। वे दैत्य विभिन्न प्रकार के वेषभूषा वाले और नाना प्रकार के गंध आदि धारण किये हुए प्रबल उत्साह से सम्पन्न थे उन सभी दैत्यों ने वामन भगवान के आते ही उन्हें घेर लिया। तभी वामन भगवान ने अति भयंकर व विशाल रूप धारण कर थप्पड़ लात मार-मारकर सभी दैत्यों को धराशायी कर दिया। इस प्रकार पृथ्वी का भार उतार कर स्वर्ग का राज्य इन्द्र को सौंप दिया।

''नाम स्मरणादन्योपायं
नहि पश्यामो भवतरणे
रामहरे कृष्ण हरे! तवनाम वदामि सदानृहरे!!
भवबन्धनहरवित्तमते
पादोदकविहताघतते
वटुपटुवेषमनोज्ञ नमो
भक्तं ते परिपालयमाम्।''

श्री पोन्नडिक्काल जीयर

श्री भवरी रघुनाथदास रांदड

अवतार स्थल - वानमामलै

आचार्य - अळगिय मणवाळ मामुनि

शिष्य गण - चोलसिंहपुरम् महार्यर (दोड्डाचार्य), समरभुंगवाचार्य, शुद्दसत्त्वमण्णा, ज्ञानक्कण्णात्थान, रामानुजंपिळ्ळै, पळ्ळक्काल् सिध्दर, गोष्ठी पुरत्तैयर, अप्पाचियाराण्णा इत्यादि

परमपद प्राप्त स्थान - वानमामलै

ग्रंथ रचना - तिरुप्पावै स्वाभदेश व्याख्यान इत्यादि

पोन्नडिक्काल जीयर का जन्म वानमामलै में हुआ और बचपन में उनके माता-पिता ने उनका नाम अळगिय वरदर रखा। वे बाद में पोन्नडिक्काल जीयर के नाम से विख्यात हुए। वें कई नामों से जाने गए जैसे वानमामलै जीयर, वानाद्रि योगी, रामानुज जीयर, रामानुज मुनि इत्यादि।

वें श्री वरवरमुनि स्वामीजी के पहले और महत्वपूर्ण शिष्य हुए।

जब श्री वरवरमुनि स्वामीजी गृहस्थाश्रम में भगवद्-भागवत कैंकर्य कर रहे थे तब पोन्नडिक्काल जीयर ने उनकी शरण ली और उनके शिष्य बने। उसी समय उन्होंने सन्यासाश्रम स्वीकार कर श्री वरवरमुनि स्वामीजी के अन्तिम समय तक उनकी सेवा में निमग्न हुए। पोन्नडिक्काल का अर्थ जिसने मामुनिगल के शिष्य सम्पत की स्थापना की हो। उन्होंने पूरे भारत देश में तोतादि मठों की स्थापना कर सत्सम्प्रदाय का प्रचार किया।

एक बार जब श्री वरवरमुनि स्वामीजी तिरुमल यात्रा के लिये पहली बार प्रस्थान कर रहे थे, उस समय पेरियप्पन्जीयर अपने स्वप्न में देखते हैं कि एक गृहस्थ व्यक्ति शय्यासन अवस्था में हैं (यानि सो रहे हैं) और उनके चरणकमलों के पास एक सन्यासी स्वामी उनकी सेवा कर रहे हैं। उसके पश्चात पेरियप्पन्जीयर वहाँ के लोगों से पूछते हैं कि ये दोनो कौन हैं और लोग कहते हैं कि एक व्यक्ति - ''ईत्तु पेरुक्कर-अळगिय मणवाळ पेरुमाळ नायनार'' हैं और दूसरें पोन्नडिक्काळ जीयर हैं (जिनको स्वयं नायनार ने यह नाम दिया)।

पोन्नडिक्काल जीयर के उत्कृष्ठ स्वभाव से सारे आचार्य उन्हें मणवाळमामुनि का उपागम (पुरुषाकार) समझते हैं और उन्ही के उपागम्यता से वे सारे मणवाळमामुनि के निकट पहुँच पाते थे। यतीन्द्रप्रभावम में कहा गया है कि पोन्नडिक्काल जीयर के कारण कई श्रीवैष्णव बने और उन सबको मामुनि का संबंध देकर उन सभी को भगवद्-भागवत कैंकर्य में संलग्न किये।

जब कन्दादै और उनके रिश्तेदार श्री वरवरमुनि स्वामीजी के शिष्य बने तब श्री वरवरमुनि स्वामीजी ने कहा कि पोन्नडिक्काल जीयर उनके प्राणों के करीब हैं और उन्हें वह सारा यश/कीर्ति इत्यादि प्राप्त होना चाहिए जो उनको स्वयं (श्री वरवरमुनि स्वामीजी) प्राप्त है। एक बार जब अप्पाचियाराण्णा, मामुनि को आचार्य के रूप में स्वीकार कर उनके पास उनके शिष्य बनने की इच्छा से जाते हैं तब श्रीमामुनि, पोन्नडिक्काल जीयर को अपने आसन में विराजमान कराते हैं और उनके हाथ में उनका शंख और चक्र सौंपकर उन्हें आदेश देते हैं कि अप्पाचियाराण्णा और कई सारे भक्तों का समाश्रयनम करें। हालांकि वे संकोच करते हैं कि वे इस कार्य को स्वीकार करें या ना करें परंतु उनके आचार्य (श्री वरवरमुनि स्वामीजी) के दृढ निश्चय को देखकर सभी भक्तों को अपने शिष्य के रूप में स्वीकार करते हैं।

वार्षिक तिरुनक्षत्र (२३.०९.२०१९) के संदर्भ में...

इसके पश्चात श्री वरवरमुनि स्वामीजी आठ दिग्गज पोन्नडिक्काळजीयर के लिये नियुक्त करते हैं जो इस प्रकार हैं - चोलसिंहपुरम्महार्यर (दोड्डाचार्य), समरभुंगवाचार्य, शुद्द सत्त्वमण्णा, ज्ञानक्कण्णात्थान, रामानुजंपिळ्ळै, पळ्ळक्काल् सिध्दर, गोष्ठी पुरत्तैयर, अप्पाचियाराण्णा।

जब अप्पाचियारण्णा को श्री वरवरमुनि स्वामीजी श्रीरंगम् छोडकर कांचिपुरम जाने का आदेश देते हैं तब वे निराश हो जाते हैं। उस समय उनकी दुर्दशा देखकर श्री वरवरमुनि स्वामीजी कहते हैं कि उनका (श्री वरवरमुनि स्वामीजी का) रामानुजम् (तीर्थ सोम्बु-लोटा) ले जाए (जिसकी पूजा पोन्नडिक्काल जीयर करते थे) और उसके धातु से श्री वरवरमुनि स्वामीजी की दो मूर्तियाँ बनाये एक अपने पास रखें और दूसरी अपने आचार्य (पोन्नडिक्काल जीयर) को दे। तो इस प्रकार अप्पाचियारण्णा श्री वरवरमुनि स्वामीजी की मूर्ती लेकर कांचिपुरम चले गए।

उसके पश्चात दैवनायकन एम्पेरुमान (वानमामलै भगवान) श्री वरवरमुनि स्वामीजी के श्री सेनैमुदलियार के द्वारा एक संदेश भेजते हैं जिसमे कहते हैं कि वानमामलै दिव्यदेश में पोन्नडिक्काल जीयर की सेवा जरूरत है। उसके अन्तर श्री वरवरमुनि स्वामीजी उन्हें आदेश देते हैं कि वे तुरन्त वानमामलै जाए और वहाँ अपना कैंकर्य करें। इसी दौरान श्री वरवरमुनि स्वामीजी अपने शिष्यों को आदेश देते हैं कि वे सारे चार हजार पाशुरों का पाठ सौ पाशुरों के क्रम में हर रोज़ करें। पेरियतिरुमोळि के सात्तुमुरै के दौरान जब ''अणियार् पोळिल् सूळ् अरन्गनगरप्पा'' का पाठ हुआ तब भगवान बहुत खुश हुए और उन्होंने एक अरन्गनगरप्पा (लक्ष्मी नारायण) की मूर्ती अपने सन्निधि से पोन्नडिक्कालजीयर को प्रसाद के रूप में दिये और कहे कि वह इसे वानमामलै ले जाए। कुछ इस प्रकार खुशि पेरियपेरुमाळ भगवान पोन्नडिक्कालजीयर को विशेष प्रसाद और शठकोप देकर उनकी बिदाई बहुत धूमधाम से करते हैं। इसके बाद मामुनि पोन्नडिक्कालजीयर को अपने मठ ले जाकर उनका तदियाराधन धूमधाम से करते हैं और उनकी बिदाई करते हैं।

फिर पोन्नडिक्कालजीयर वानमामलै में रहकर अनेक कैंकर्यों में संलग्न होते हैं। उसी दौरान वह आस पास के दिव्यदेशों (जैसे नवतिरुपति, तिरुक्कुरुन्गुडि) आदि और बद्रीकाश्रम जैसे यात्रा में अपनी सेवा निरन्तर करते हैं। उसी दौरान उनके अनेक शिष्य हुए और उन सबको कालक्षेप देकर वह आदेश देते हैं कि वह सारे अपनी अपनी सेवा उन दिव्यदेशों में करते रहें।

पोन्नडिक्काल जीयर एक लम्बी उत्तर दिशा की यात्रा के लिये निकल पडे। उसी दौरान श्री वरवरमुनि स्वामीजी अपनी लीला इस भौतिक जगत में समाप्त कर परमपद को प्रस्थान हुए। जब पोन्नडिक्काल जीयर अपनी यात्रा समाप्त करके तिरुमल पहुँचते हैं तभी उन्हें पता चलता है कि उनके आचार्य परमपद को प्रस्थान हुए और यह सुनकर बहुत दुःखित हो उसी अवस्था में कुछ और दिनों केलिए रुख गए।

पोन्नडिक्काल जीयर अपने इकट्ठित धन राशि (यात्रा के दौरान हासिल) श्रीरंगम् में आकर अपने आचार्य के पोते

(जीयर्नायिनार) और कई सारे श्रीवैष्णवों से मिलकर अपने आचार्य को खोने का दुःख बाँटते हैं। उस समय श्री वरवरमुनि स्वामीजी के निर्देशानुसार, श्री वरवरमुनि स्वामीजी का उपदण्डम्, अंगूठी (तिरुवाळिमोदिरम्) पादुकाएँ श्री पोन्नडिक्कालजीयर को सौंपते हैं। कहा जाता है कि आज भी उपदण्ड वानमामलै जीयरों के डण्दों के साथ बांधा जाता है और विशेष दिनों में श्रीमणवालमामुनि की अंगूठी पहनते हैं। अतः कुछ इस प्रकार वह वानमामलै वापस आकर अपना कैंकर्य निभाते हैं।

उस समय वानमामलै में श्री वरमंगैनाचियार का उत्सव विग्रह नही था और उसी से परेशान थे पोन्नडिक्काल जीयर। एक बार भगवान (दैवनायकन) उनके स्वप्न में आकर कहते हैं कि उन्हें तिरुमल से नाचियार का उत्सवविग्रह लाना चाहिए। भगवान की इच्छा पूरी करने हेतु वे तिरुमल जाते हैं। वहाँ पहुँचने के बाद उन्हें स्वप्न में श्रीनाचियार कहती है कि उन्हें वानमामलै तुरन्त ले जाए और उनकी शादी दैवपेरुमाळ से करवाई जाए। इसी दौरान तिरुमल के जीयर स्वामीजी के स्वप्न में श्रीनाचियार आती है और उन्हें भी यही उपदेश देती है। यह जानकर दोनों जीयर उनके आदेश को स्वीकार कर उत्साह से नाचियार की बिदाई करवाते हैं। पोन्नडिक्काल जीयर श्रीनाचियार को वानमामलै लाकर उनकी दैवनायकन पेरुमाळ भगवान से शादी अत्यन्त वैभव से करवाते हैं। पोन्नडिक्काल जीयर नाचियार के पिता स्वरूप बनकर उनका कन्यादान दैवनायकन पेरुमाळ भगवान से करते हैं। दैवनायकन पेरुमाल कहते हैं कि जैसे भगवान पेरियपेरुमाळ के ससुरजी पेरिआळ्वार हुए वैसे ही पोन्नडिक्काल जीयर उनके ससुरजी हुए और आज भी यह बहुत गर्व और सम्मान से किया जाता है और यही वानमामलै दिव्यदेश में अनुसरण होता है।

शिष्यों को कई सालों तक अपने महत्वपूर्ण निर्देशों की सूचना व्यक्त करने के पश्चात वह अपने आचार्य का ध्यान करते हुए अपने शरीर (चरम तिरुमेणि) का त्याग कर परमपद की प्राप्ति करते है। वह अपने अगले उत्तराधिकारि (अगले जीयर वानमामलै मठ) को नियुक्त करते हैं और यह आचार्य परम्परा आज भी जारी है।

अब हम श्री पोन्नडिक्कालजीयर के चरणकमलों का आश्रय लेते हुए उनसे प्रार्थना करें कि हम सभी भक्तों में उनके जैसे आसक्ति, हमारे वर्तमानाचार्य पूर्वाचार्य और श्रीभगवान (एम्पेरुमान) में हो।

पोन्नडिक्कालजीयर का तनियन (दोड्डाचार्य विरचित) -
रम्यजामात्रुयोगीन्द्रपादरेखामयस्सदा।
तथा यत्तात्मसत्तदिम् रामानुजमुनिम् भजे।।

दोड्डाचार्य ने पोन्नडिक्कालजीयर के महत्व/श्रेष्ठता को संस्कृत श्लोकों से विरचित निम्नलिखित

स्तोत्रों में किया है जिसका भावार्थ अब हम सरल हिंदी में जानेंगे।

वानमामलै जीयर मंगलाशासन

१) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो श्री वरवरमुनि स्वामीजी के कृपायुक्त हैं, जो स्वयं करुणासागर हैं, जो दिव्यहृदयी हैं, जिन्मे जन्म से ही दिव्यमंगल लक्षण है और जो स्वयं रूप से अळगीय वरदर हैं।

२) मेरी आराधना सिर्फ और सिर्फ श्रीरामानुजजीयर के लिये है क्योंकि वह जीयर स्वामियों के और हमारे सांप्रदाय के अभिनेता हैं और श्री वरवरमुनि स्वामीजी के कृपा से सारे सद्गुणों का समावेश हैं।

३) मैं ऐसे श्रीरामानुज जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो स्वयं श्री मामुनि के चरणकमलों में मधु-मक्खि के तरह हैं और जो पूर्ण चन्द्रमा की तरह मेरे मन को हर्षित करते हैं।

४) मैं ऐसे श्रीरामानुज जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो वात्सल्य, शील / चरित्र और ज्ञान जैसे सद्गुणों के सागर हैं और जिनको श्री वरवरमुनि स्वामीजी जीवन देने वाले सांस की तरह मानते हैं।

५) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिन्होने ब्रह्मचर्य से सीधे सन्यास लिये और गृहस्थाश्रम और वानप्रस्थाश्रम को शर्मिन्दगि का एहसास दिलाये।

६) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो प्रथम हैं जिन्हे श्री वरवरमुनि स्वामीजी के कृपा और आशीर्वाद की प्राप्ति हुई और जो अपने कृपा से काम अथवा क्रोध जैसे कई दोषों से हमे विमुक्ति दिलाते हैं।

७) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो स्वयं अनन्त सद्गुणों के धारक हैं और जो भौतिक संसार के इच्छावों और अनिच्छावों से विमुक्त हैं और जो स्वयं अरविन्द दलयताक्ष हैं।

८) मैं ऐसे श्रीरामानुज जीयर को देखकर बहुत आनंद महसूस करता हूँ क्योंकि वैराग्य की लता जो हनुमानजी में सबसे पहले विकसित हुआ, वही भीष्म पितामह में और भी विकसित होकर बढ़ा और पूर्ण तरह श्रीरामानुज जीयर में विकसित होकर प्रफुल्लित हुआ।

९) मैं ऐसे रामानुजजीयर के चरणकमलों का अश्रय लेता हूँ जिनके उभयवेदान्त उपन्यास से बड़े अच्छे विद्वानों आकर्षित होते हैं, जिनका स्वभाव सर्वोत्कृष्ट है और वही अनुशीलन सन्यासि करते हैं, जो दोष रहित हैं, जो संपूर्ण ज्ञान और सद्गुणों से भरपूर हैं और जिन्होंने श्री वरवरमुनि स्वामीजी के चरणकमलों का आश्रय लिया है।

१०) मैं ऐसे रामानुजजीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिनके उपन्यास में पशु-पक्षि घोषणा करते हैं कि - श्रीमन्नारायण प्रधान (सर्वोच्च) है और अन्य देवता उनकी शेषी है।

११) मैं ऐसे रामानुजजीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिनके नयन कटाक्ष से अर्थपञ्च के ज्ञान की प्राप्ति होती है, जिन्होने कई सारे कैंकर्य (सेवा) वानमामलै दिव्यदेश में किया और जो शिष्यों के लिये एक कल्पवृक्ष थे।

१२) मैं ऐसे रामानुजजीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिन्होने अपने शुध्द दिव्य कृपा से मुझे भगवद्-भागवत कैंकर्य में संलग्न किया (यानि परिवर्तन/सुधार किया जो इस भौतिक जगत के आनंद में संलग्न था और जिसे श्रीवैष्णवों के प्रति कदाचित रुचि नही थी)।

१३) मैं ऐसे रामानुजजीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो ज्ञान के भण्डार हैं, जिनकी वजह से वैराग्य शान्ति पूर्वक विश्राम ले रहा है, जो एक कीमती खजाना के पेटी की तरह हैं और जो सत्-साम्प्रदाय के अगले उत्तराधिकारि (जिसे श्री एम्पेरुमानार ने खुद स्थापित किया) के काबिल और सक्षम हैं।

१४) मैं ऐसे रामानुजजीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिनमे श्रीमामुनि की कृपा का समावेश है, जो सद्गुणों के भण्डार हैं और दैवनायकन एम्पेरुमान के प्रति जिन्हे असीमित लगाव है।

वानमामलै जीयर प्रपत्ति

१) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो एक खिले हुए फूल की तरह सुंदर हैं, जिन्हें देखर नयनानंद की प्राप्ति होती है, जो हमे इस भवसागर के जाल से बचा सकते हैं।

२) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिन्होंने यश और कीर्ति श्री वरवरमुनि स्वामीजी के दिव्यानुग्रह से प्राप्त की, जो हमारे कमियों को नष्ट करने में सक्षम हैं, जो शिष्यों के लिये एक कल्पवृक्ष हैं और जो सद्गुणों के सागर हैं।

३) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिन्होंने श्री वरवरमुनि स्वामीजी के चरणकमलों का आश्रय लिया है और वह किसी भी कारण गृहस्थाश्रम में नहीं पड़े क्योंकि गृहस्थाश्रम इस भौतिक जगत के भवसागर में उन्हें बान्ध देगा।

४) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिनमे विरक्ति भावलता (जो हनुमान से शुरू हुई थी) परिपूर्ण होकर उन्में परिव्याप्त हुई।

५) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिन्होंने अपने आचार्य की सेवा में बहुत सारे मण्डपों का निर्माण और उनका अभिनेतृत्व वानमामलै में किया जैसे आदिशेष भगवान के लिये करते हैं।

७) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिन्होंने नम्माळ्वार के दिव्य पाशुरों का गहरावेदान्तार्थ बहुत ही सरल भाषा में प्रस्तुत किया।

७) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिनका नाम इस भौतिक जगत के भवसागर सर्प को विनाश कर सकता है और बध्दजीवात्मावों को भगवान के समान उत्थापन होता है।

८) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो हमे हमारे अंगिनत जन्मों में किये गये पापों/दुष्कर्मों से विमुक्त करने में सक्षम हैं, और जिन चरणों को साधुजन सदैव पूजा करते हैं।

९) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिनका श्री पादतीर्थ किसी को भी शुध्द कर सकता है और तापत्रय की ज्वाला को पूर्ण तरह से नष्ट करती है।

१०) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो शुध्द और सद्गुणों के सागर हैं और जिनका आश्रय श्री अप्पाचियाराण्णा ने लिया था।

११) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जो शुध्द और सद्गुणों की चोटी हैं और जिनका आश्रय समरभुन्गवाचार्य ने लिया था और उनके चरण साधुजन सदैव पूजा करते हैं।

१२) मैं ऐसे श्री वानमामलै जीयर के चरणकमलों का आश्रय लेता हूँ जिनका वैराग्य हनुमान, भीष्म पितामह इत्यादि से सर्वाधिक है, उनकी भक्ति ओराण्वळिआचार्यों के बराबर है, उनका ज्ञान श्रीनाथमुनि, श्रीयामुनमुनि के बराबर है और ऐसी तुलना में कौन वानमामलै जीयर से सर्वोत्तम हो सकता है।

१३) उन्होनें श्री दैवनायकन एम्पेरुमान की सेवा आदिशेष की तरह किया। उन्होंने भगवान के भक्तों का गुणगान श्रीकुलशेखर स्वामीजी की तरह किया। उन्होंने अपने आचार्य श्री वरवरमुनि स्वामीजी कि पूजा किये जैसे श्रीमधुरकवि स्वामीजी ने श्रीनम्माळ्वार कि पूजा किये थे। वे पूर्वाचार्यों के पदचाप के राह में चले और सद्गुणों के धारक हुए।

१४) बहुत पहले श्री एम्पेरुमान ने नर-नारायण का अवतार लिया था अब वही एम्पेरुमान श्री वरवरमुनि स्वामीजी और वानमामलै जीयर के रूप में प्रकट हुए। कुछ इस प्रकार श्री वानमामलै जीयर का कीर्ति था।

(गतांक से)

सियाराम ही उपाय

शरणागति मीमांसा

(पंचम खण्ड)

सियाराम ही उपेय

मूल लेखक
श्री सीतारामाचार्य स्वामीजी, अयोध्या

प्रेषक
दास कमलकिशोर हि तापडिया

८९

श्रीमते रामानुजाय नमः

नायं जनो में सुख दुःख हेतुर्न देवतात्मा ग्रह कर्म काला।
मनः परं कारण मामनन्ति संसार चक्रं परिवर्त्त येद्यत्।।

उस मुमुक्षु महात्मा का यही बचन है। इसका अर्थ पहले ही कह चुके हैं। जिन लोगों ने चिर काल तक अच्छे-अच्छे मुमुक्षुओं का सत्संग नहीं किया वे ही लोग दूसरों को तथा देवों को तथा ग्रहों को सुख-दुःख का कारण मानते हैं। परन्तु वास्तव में यह बात नहीं है। यदि दुःख छुड़ाना और सुख देना देवता तथा ग्रहों के हाथ में होता तो फिर उन लोगों को कभी भी दुःख नहीं होना चाहिये किन्तु ऐसा नहीं होता है। इतिहासों के द्वारा सुनने में आता है कि सब जीवों के समान देवता तथा ग्रहों के ऊपर भी उन लोगों के प्रारब्ध के अनुसार समय-समय पर दुःख सुख आया जाया करता है। सुनने में आता है कि कई बार इन्द्रादि देवताओं पर भी भयंकर विपत्ति आई और उन लोगों ने भगवान के द्वारा उन विपत्तियों से छुटकारा पाया। ग्रहों की भी यही हालत है। आपस में वे लोग भी कई बार परस्पर संघर्ष करके दुःख भोगा करते हैं। यदि उन्हीं लोगों के हाथ में दुःख छुड़ाना होता तो उनके ऊपर फिर दुःख नहीं आना चाहिए था। परन्तु उन लोगों पर भी दुःख आता ही है और उन दुःखों से छूटने के लिये वो लोग परमात्मा के शरण जाकर उन दुःखों से छुटकारा पाते हैं। यदि उन्हीं के हाथ में सुख देना होता तो प्रभु से सुख मिलने के लिये उनके शरण में क्यों जाते। अतः हम से जो ये लोग उपद्रव मचा रहे हैं इन लोगों का मैं कुछ भी दोष नहीं समझ रहा हूँ। ये सब हमारे प्रारब्ध का ही कारण है ऐसा विचार करके अपने मन को मैं समझा लेता हूँ। इसी से हमारी शान्ति भंग नहीं होती है। इससे मुमुक्षुओं को चाहिये कि अपना अपमान करने वालों पर ईर्ष्या बैर न करे। इस शरीर का कितना भी कोई अपमान करे तो आत्मा की हानि तो कुछ होती ही नहीं। फिर कोई कितना भी अपमान करे हमारा क्या जाता है यदि अपमान करने वालों से प्राकृतों के समान ज्ञानी मुमुक्षु भी ईर्ष्या बैर करें तो फिर सत्संग करने से उसे लाभ ही क्या मिला। बात बात में ईर्ष्या बैर तो वे लोग करते हैं जो शरीर को आत्मा समझ रखे हैं। एक महात्मा जड़ भरत हुए थे। वे खुद अपना अपमान कराने की कोशिश करते थे, फिर मुमुक्ष होता हुआ मैं किसी के अपमान करने से अपनी शान्ति को कैसे छोड़ सकता हूँ। उस मुमुक्षु महात्मा का बचन सुन कर वह पूछने वाला सज्जन दंग होकर रह गया और मन में कहने लगा कि परमात्मा के प्यारे महात्माओं का लोकोत्तर चरित्र होता है। महात्मा धनीरामजी अपने मन को समझा रहे हैं कि हे मन! मुमुक्षुओं का अनुष्ठान विचार कैसा लोक विलक्षण होता है, सो तो तुम समझ ही गये। इससे जो तुम्हारा स्वरूप है उसकी सदा तुम्हें रक्षा करनी चाहिए। आजन्म कभी भगवान श्रीकान्त के अतिरिक्त किसी भी देवतान्तरों में भूल कर भी नहीं पड़ना चाहिये। जो लोग सत्संग रहित सामान्य अधिकारी हैं भली भाँति शास्त्रों का रहस्य नहीं जानते हैं वे ही लोग देवताओं के द्वारा कुछ सुख पाने की कामना से देवताओं में प्रबृत होते हैं। इससे गीता में उन्हें हृतज्ञान बताया है। जैसे-

कामैस्तैस्तै र्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्य देवताः।

यह भगवान की श्रीमुख वाणी है। गीता में अर्जुनजी से भगवान कहे हैं कि कामनाओं से जिन लोगों का ज्ञान नष्ट हो जाता है वे ही लोग देवतान्तरों की उपासना करते हैं। आखिरी में देवताओं के द्वारा उन लोगों को जो फल मिलता है वह बिल्कुल नाशवान होता है। वे लोग बिल्कुल अल्प बुद्धि वाले हैं

क्यों कि जो फल नाश हो जाने वाला है उसके लिये स्वरूप विरुद्ध देवतान्तरों कि उपासना करते हैं। यदि कदाचित वे लोग देवताओं के लोक में भी जाते हैं तो कालान्तर में फिर भी उन्हें जन्म-मरण चक्र में आना ही पड़ता है। तो यदि बार-बार मृत्यु लोक में आना ही पड़े आवागमन से छुटकारा ही न मिले फिर उस उपासना से ही क्या लाभ इससे जो अच्छे समझदार मुमुक्षु लोग हैं सो तो नाशवन्त फल देने वाली उपासनाओं को त्याग कर हमारी ही शरण लेते हैं और अन्त में सदा के लिये आवागमन से रहित होकर हमारे दिव्यधाम में चले जाते हैं।

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान् देवयजोयान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि।।

इसका भाव पहले ही कह चुके हैं। मुमुक्षु धनीरामजी अपने मन को समझाते हुए कहते हैं कि क्यों मन! भली भाँति अब तुम समझ गये होवोगो। सच्चे मुमुक्षुओं को स्वप्न में भी देवतान्तरों में नहीं पड़ना चाहिए। इससे अनन्या शेष जो तुम्हारा स्वरूप है उसका सदा रक्षण करो। फिर दूसरा स्वरूप इस चेतन का अनन्यार्ह शरणत्व है। इस चेतन का स्वरूपानुरूप उपाय भगवान श्रीनिवास ही हैं। इसका मतलब यह हुआ कि श्रीपति की कृपा ही को अन्त पर्यन्त जो बड़ भागी चेतन पकड़े रहेगा उसे इस शरीर के अन्त में अवश्य ही मोक्ष हो जावेगा। इसमें बिल्कुल सन्देह नहीं है। श्रीहरि के श्री चरणारबिन्दों के भरोसे पर ताजिन्दगी रहने वाले बड़भागी पुरुष को फिर इस जन्म-मरण चक्र में नहीं आना पड़ेगा। शास्त्रों का तथा उच्चकोटि के पहुँचे हुए महात्माओं का यह अटल सिद्धान्त है। श्री वेंकट बिहारी की निर्हेतुक कृपा के सिवाय संसार से तरने के जितने ऊपाय हैं। वे अनेक विघ्नों से भरे हुए हैं। उन उपायों के भरोसे रहने वालों का संसार बन्धन कब कटेगा इसको कोई भी निश्चय करके नहीं कह सकता है। भगवान की निर्हेतुक कृपा के ऊपर रहने वाले मुमुक्षुओं को इतर अवछम्ब जड़मूल से त्याग कर रहना चाहिए। श्री कृपा अवलम्बियों के लिये यह भी सक्त नियम है। इसीलिए हे मन! सदा के लिए यह श्रीकान्त की निर्हेतुक कृपा ही के ऊपर स्थिति रखो। अब की बार श्री गुरु कृपा से प्राप्त जो भगवान की निर्हेतुक कृपा है उसके जरिये अवश्य ही मुझे बिरजा स्थान मिलेगा। इस बात पर निःसन्देह दृढ़ विश्वास करके रहो। यदि श्रीहरि के श्रीचरणों के निर्हेतुक अनुग्रह का भरोसा छोड़ कर संसार से तरने के लिए स्वप्न में भी यदि दूसरा भरोसा मन से पकड़ोगे तो जानो कि देव दुर्लभ मनुष्य देह से कुछ भी लाभ नहीं मिला। अब तीसरा अनन्य भोग्यत्व जो इस चेतन का स्वरूप है, इसको भी पूर्णरूप से भलीभांति समझ कर रहना चाहिए। इसका मतलब यह है कि यह चेतन प्यारे परमात्मा का अनन्य भोग्य है। याने एक श्रीहरि का ही कैंकर्य करने का स्वरूपानुरूप परम अधिकार है। श्री लक्ष्मी निवास के सिवा यह आत्मा अन्य किसी का भी भोग्य नहीं है। इसको भगवान श्रीरंगनाथ के कैंकर्य के अतिरिक्त अन्य देवतान्तरों में प्रवृत होने का बिल्कुल स्वरूप नहीं है। श्री श्यामसुन्दर की सेवा भी स्वार्थ रहित ही करने का इसका उच्च कोटि का स्वरूप है। इससे तुम्हें श्रीहरि ही के कैंकर्य में निरत रहना चाहिए और भगवान श्री नारायण से बारम्बार स्वार्थ रहित उनकी नित्य सेवा मिलने के लिए ही उनसे पुनः पुनः प्रार्थना करते रहना चाहिए। इस चेतन का क्या स्वरूप है सो तुम खूब समझ गये होवोगे। बस! अनन्यार्ह शेषत्व, अनन्य शरणत्व, अनन्य भोग्हत्व, यही आत्मा के तीन वास्तविक स्वरूप हैं। इसीको आकारत्रय कहते हैं। एक से आत्मा का स्वरूप ज्ञान होता है, दूसरे से आत्मा के स्वरूपानुरूप उपाय का ज्ञान होता हैं, तीसरे से स्वरूपानुरूप पुरुषार्थ का ज्ञान होता है। याने स्वरूपानुरूप फल मालूम पड़ता है। यदि इतना समझ में आ गया तो मानो कि सब शास्त्रों का सारांश भाग हस्तामलकवत् हो गया। (क्रमशः)

महाराज पृथु
एक शक्त्यावेश अवतार

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवांघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

महाराज पृथु सीधे भगवान श्रीकृष्ण के एक शक्त्यावेश अवतार थे। श्रीमद्भागवतम् के शब्द ''कृष्णस्य भवेद्भगवतः'' इस तथ्य की पुष्टि करते हैं। महाराज पृथु की कथा भागवतम् के चतुर्थ स्कन्ध में वर्णित है। इसी कारण मैत्रेय एवं विदुर ने उनके कार्यकलापों का वर्णन किया, जिनका श्रवण करना अत्यंत आनंददायक है। पुरोहितों एवं संतों द्वारा पृथु महाराज का राज्याभिषेक किये जाने के समय पृथ्वी पर अन्न की बहुत कमी थी। पर्याप्त भोजन के अभाव में लोग बहुत दुबले हो गये थे। राजा वेन के आसुरी राज के कारण उत्पन्न हुई उस दयनीय स्थिति का वर्णन करने के लिए सभी लोग पृथु के पास पँहुचे। अपने दुःख का वर्णन करते हुए उन्होने कहा जिस प्रकार एक अग्नि निक्षिप्त वृक्ष अन्ततः अग्नि से सूख जाता है, उसी प्रकार उनके पेट की अशांत भूख की अग्नि उनके शरीर को पूर्णतया सुखा देगी।

राजा पृथु ने उनकी स्थिति के बारे में ध्यानपूर्वक सुना और उनकी निराशा के वास्तविक कारण के बारे में सोचने लगे। वे इस निर्णय पर पहुँचे कि इस स्थिति का एक मात्र कारण धरती माता ही हैं, इसलिए उन्होने अपने तीव्र बाँणों से पृथ्वी पर प्रहार करने के लिए लक्ष्य साधा। राजा पृथु के उस डरावने भाव से भयभीत होकर पृथ्वी ने एक गाय का रूप धारण कर लिया और अपनी रक्षा करने के लिए भागने लगी। जीवन रक्षा के लिए पृथ्वी गाय के रूप में दौड़ती हुई सभी जगहों पर गई, लेकिन राजा पृथु ने उसका पीछा न छोड़ा। अंत में, पृथ्वी ने राजा को आजीवन समर्पण करने का निश्चय किया। पृथ्वी ने राजा से क्षमा याचना की। पृथ्वी ने स्वयम् की भाँति एक स्त्री को दण्ड न देने का परामर्श भी दिया। लेकिन, राजा पृथु ने पृथ्वी को अनेको प्रकार की चुनौती दी।

अन्त में, पृथ्वी माता ने राजा पृथु को पूर्ण समर्पण करके याद दिलाया कि उन्होने पूर्वकाल में अनेकों बार पृथ्वी की रक्षा की है। पृथ्वी ने कहा कि जिन अन्नों, जड़ी-बूटियों तथा मूलों की ब्रह्माजी ने सृष्टि की थी, उनका उपयोग अब नास्तिक व्यक्तियों के द्वारा किये जाने के कारण हमने उन सभी बीजों को छिपा लिया है। पृथ्वी ने उस सभी धान्यों को शास्त्रों में विदित परंपरागत विधि द्वारा बाहर निकालने का सुझाव दिया।

उसने कहा ''हे राजन! यदि आप जनता के पोषण के लिए मुझे दुह कर उन सभी आवश्यक वस्तुओं को पाना चाहते हैं तो इसके लिए आप को उपयुक्त बछड़ा तथा दूध रखने के लिए दोहनी की व्यवस्था करनी होगी। चूँकि मैं अपने बछड़े के प्रति अत्यंत वत्सला रहूँगी, अतः मैं वे सभी आवश्यक वस्तुएँ दूँगी जिनका आप दोहन करना चाहेंगे। आप अपनी वीरता से भूमण्डल की सतह को समतल बनाकर उचित फसलों के लिए वर्षा का पर्याप्त जल पृथ्वी पर रोक सकते हैं।'' राजा पृथु पृथ्वी के उन वचनों से बहुत प्रसन्न हुए और उन्होने तुरन्त स्वायंभुव मनु को बछड़ा एवं अपनी अंजुली को दोहनी बनाया। इस प्रकार उन्होने सभी अन्न एवं औषधियाँ दुह लीं।

राजा पृथु की उन अद्‌भुत्‌ क्रियाओं को देखकर अन्य व्यक्तियों ने भी पृथ्वी माता से आवश्यक वस्तुएँ दोहने का प्रयत्न किया। संतों ने बृहस्पति को बछड़ा बनाकर इन्द्रियों की दोहनी में समस्त वैदिक ज्ञान को दुह लिया। देवताओं ने इन्द्र को बछड़ा बनाकर पृथ्वी से सोम रस अर्थात अमृत दुह लिया, जिससे शक्ति में वे अत्यंत प्रबल हो गये। असुरों ने प्रह्लाद को बछडा बना कर पृथ्वी से अनेक प्रकार की सुरा तथा आसव निकाले और उन्हे लोहे के पात्र में रखा। गन्धर्वों एवं अप्सराओं ने विश्वावसु को बछड़ा बनाया और कमल पुष्प के पात्र में दूध दुहा। उस दूध ने संगीत एवं सुंदरता का रूप धारण कर लिया। पितृलोक के वासियों ने अर्यमा को बछड़ा बनाकर मिट्टी के कच्चे पात्र में कव्य (पितरों को दी जाने वाली बलि) दुह लिया। विद्याधरलोक के वासियों ने कपिल मुनि को बछड़ा तथा आकाश को पात्र बनाकर अणिमादि सारी योगशक्तियाँ दुह लीं। इस प्रकार उन्होने आकाश में उड़ने की कला प्राप्त की।

किम्पुरुष-लोक के वासियों ने मय दानव को बछड़ा बनाकर दृष्टि से तुरन्त ओझल होने वाली अन्तरधान की कला दुह ली। यक्षों ने शिव को बछड़ा बनाकर मदिरा दुह ली और उसे कपालों से बने पात्रों में रखा। साँपों, बिच्छुओं तथा अन्य विषैले पशुओं ने तक्षक को बछड़ा बनाकर सर्प के बिलों की दोहनी में विष दुह लिया। गायों जैसे चार पैरों वाले पशुओं ने शिव के वाहन नन्दी को बछड़ा बनाकर वन की दोहनी में हरी घास को दुह लिया। हिंसक पशुओं ने सिंह को बछड़ा बनाकर माँस दुह लिया। पौधों ने बरगद के वृक्ष को बछडा बनाकर रसमय दूध को दुहा। पर्वतों ने हिमालय को बछड़ा बनाकर नाना प्रकार की धातुएँ दुहीं।

इस प्रकार राजा पृथु के साथ अन्य सभी लोग पृथ्वी माता से अपनी इच्छित वस्तुओं को प्राप्त करके संतुष्ट हो गये। संतुष्ट होकर राजा पृथु ने पृथ्वी के प्रति इस प्रकार स्नेह प्रकट किया, जैसे वह उनकी पुत्री हो। तब उन्होने अपने धनुष के बल से पर्वतों को तोड़ कर पृथ्वी को समतल बना दिया। पृथ्वी की सतह को समतल करके उन्होने उस पर मनुष्यों के लिए निवास-स्थानों का निर्माण किया। राजा पृथु के शासन से पहले बड़े नगर, ग्राम या उद्यान नहीं होते थे। राजा पृथु की वीरता के कारण ही लोग प्रसन्नता पूर्वक निवास करने के लिए बड़े घरों का निर्माण कर सके। केवल उनके राज्यकाल से ही नगरों तथा ग्रामों की योजनाएँ बनने लगीं।

मनुष्यों की सभी इच्छाएँ पूर्ण करने के बाद, राजा पृथु ने सरस्वती नदी के किनारे पर एक सौ अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय किया। भव्य रूप से व्यत किये गये उन यज्ञों में, श्रीभगवान्‌ विष्णु स्वयम्‌ पूर्णतया संतुष्ट होकर साक्षात्‌ उपस्थित थे। उनके साथ सभी देवता जैसे ब्रह्माजी, शिवजी एवं उनके अनुचर भी थे। गन्धर्व, अप्सराएँ एवं सिद्धलोक के वासी भी वहाँ उपस्थित थे। कपिल, नारद एवं दत्तात्रेय जैसे अनेकों ऋषि भी

आया थे। यज्ञस्थल में भगवान विष्णु के प्रकट होने से सभी की इच्छाएँ पूर्ण हो गईं। राजा पृथु के उस गौरवपूर्ण कार्य को न सह पाने के कारण इन्द्र ने, यज्ञोत्सव में विघ्न डालने के लिए, अन्तिम यज्ञ के घोड़े को चुरा लिया। उन्होने यज्ञस्थल से घोड़े को चुराने के लिए कपट-वेष में सन्यासियों के अनेक रूप धारण करके समाज में झूठी पद्धतियों को प्रारंभ किया। इन्द्र के उस व्यवहार से अत्यंत कुपित होकर राजा पृथु उनका वध करने के लिए सन्नद्ध हो गये। लेकिन पुरोहितों ने उन्हे रोका और कहा कि वे मंत्रों की शक्ति द्वारा इन्द्र को लाकर अग्नि में भस्म कर देंगे। इस प्रकार पुरोहितों ने मंत्रों द्वारा इन्द्र को बलपूर्वक वहाँ बुला लिया। वे अग्नि में आहुति डालने ही वाले थे, लेकिन उसी समय ब्रह्माजी ने वहाँ प्रकट होकर दुर्घटना को रोक दिया। ब्रह्माजी ने राजा पृथु से कहा कि आप मोक्ष के मार्ग से भलीभाँति परिचित हैं, अतः आप को और अधिक यज्ञ करने की आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार ब्रह्माजी ने निश्चित किया कि महाराज पृथु को सौवां यज्ञ करने की आवश्यकता बिलकुल नहीं है।

महाराज पृथु ने ब्रह्माजी के वचनों को स्वीकार किया और राजा इन्द्र से सन्धि कर ली। तब उन्होने सभी यज्ञों के समापन हेतु स्नान किया और सन्तों, पुरोहितों एवं देवताओं से आशीष तथा वर प्राप्त किये। राजा ने ब्राह्मणों को प्रचुर मात्रा में दान दिये। महाराज पृथु की महानता यह है कि उनके द्वारा सौवें यज्ञ को पूर्ण न करने पर भी भगवान ने यज्ञशाला में प्रकट होकर उन्हे आशीर्वाद दिया। भगवान राजा इन्द्र को यज्ञस्थल पर अपने साथ लाये थे। इस प्रकार महाराज पृथु अपने देश एवं जनता पर पूर्णता से शासन करके अत्यंत विख्यात हुए।

यात्रियों को सूचना

१. मुफ्त में सामान परिवहन केन्द्रः तिरुपति के अलिपिरि से और श्रीवारि मेट्टु से पैदल रास्ते में जानेवाले भक्तों को अपने सामान को अलिपिरि और श्रीवारि मेट्टु के पास स्थित मुफ्त सामान परिवहन केन्द्र में देना चाहिए। फिर इस सामान को तिरुमल स्थित सामान परिवहन केन्द्र में वापस लेना होगा।

२. पीने का पानी और सुरक्षाः अलिपिरि से पैदल रास्ते में जानेवाले भक्तों को रास्ते भर पीने के पानी को प्रबंध किया गया है और यात्रियों की सुरक्षा के लिए देवस्थान ने सुरक्षाकर्मियों की नियुक्ति की।

३. तिरुमल में ठहरने के लिए आवास समुदायः भक्तों ने ठहरने के लिए तिरुमल में निःशुल्क आवास समुदाय की व्यवस्था की गयी है। इस में मुफ्त लॉकर, मुफ्त भोजन और शौचालय की सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

४. बस की सुविधाः तिरुमल में एक प्रांत से दूसरे प्रांत तक जाने के लिए मुफ्त में बस की व्यवस्था की गयी है। लगभग १२ बसें इस कार्य में संलग्न हैं। ति.ति.देवस्थान के आध्वर्य में हर ४ मिनिट को एक बस २४ घंटे चलते रहते हैं।

५. निःशुल्क भोजन की सुविधाः तिरुमल मंदिर के निकट मातृश्री तरिगोंडा वेंगमांबा नित्य अन्नदान भवन समुदाय में भक्तों को निःशुल्क भोजन की सुविधा उपलब्ध है।

६. क्यू कांप्लेक्स में प्रसाद वितरणः 'क्यू कांप्लेक्स' में श्री बालाजी के दर्शनार्थ प्रतीक्षा करनेवाले भक्तों को मुफ्त में दूध और प्रसाद का वितरण किया जा रहा है।

(गतांक से)

श्री रामानुज नूट्रन्दादि

मूल - श्रीरंगामृत कवि विरचित

प्रेषक - श्री श्रीराम मालपाणी

पोरुळुम् पुदुल्वरुम् पूमियुम्, पूङ्गुळलारु मेन्ने
मरुळ् कोण्डिळैक्कुम् नमक्कु नेञ्जे, मत्तुळार् तरमो
इरुळ् कोण्ड वेन्तुयर् मात्ति त्तन्नीरिल् पेरुम्बुहळे
तेरुळुम् तेरुळ् तन्दु, इरामानुजन् शेय्युम् शेमङ्गळे ॥३९॥

अर्थपुत्रक्षेत्रवनितादिविषयेषु कामनाभून्मा विवेकान्ध्यमासाद्य क्लिश्यमानानामस्माकं अविवेकमवसादभरं च निरस्य स्वकीयनिरवधिक कल्याणगुणविचिन्तनवैयग्रीमेव वितरता भगवता रामानुजेन क्रियमाणां रक्षाम् अयि हृदय! अनन्यसाधारणीमवधेहि। (रामानुजादन्यो नैवं कर्तुं शक्त इति, अस्मद्व्यतिरिक्तस्य जन्तोरीदृशानुग्रहपात्रता दुर्लभेति च तात्पर्यमवसेयम् ॥

यों रटते हुए कि, यह मेरा धन है, ये मेरे पुत्र है, यह मेरा खेत हैं, ये मेरी पुष्पालंकृत सुकेशिनी स्त्रियाँ है, इत्यादि, उन्हीं में आशा लगा कर, अपना विवेक खो कर, दुःख पाते रहनेवाले हमारे अज्ञान एवं क्रूर दुःख मिटाकर, हमें अपने अनंत कल्याण गुणों का ही ध्यान करने योग्य ज्ञान भी देकर, श्रीरामानुज स्वामीजी जो हमारी रक्षा कर रहे हैं, यह, हे मन! क्या दूसरों के योग्य है? (नहीं, नहीं॥) (विवरण- पुत्रदारगृहक्षेत्रादि सांसारिक क्षुद्रविषयों के मोह में ही फँस कर श्रेय का मार्ग नहीं जाननेवाले मेरे अज्ञान व उसका भी मूल कर्म मिटाकर, मुझको अपना भक्त बनाने की कृपा श्रीरामानुज स्वामीजी के सिवा, दूसरे किसी में क्या कभी रह सकती है? एवं ऐसी विलक्षण कृपा का पात्र क्या मेरे सिवाय दूसरा कोई हुआ है?।

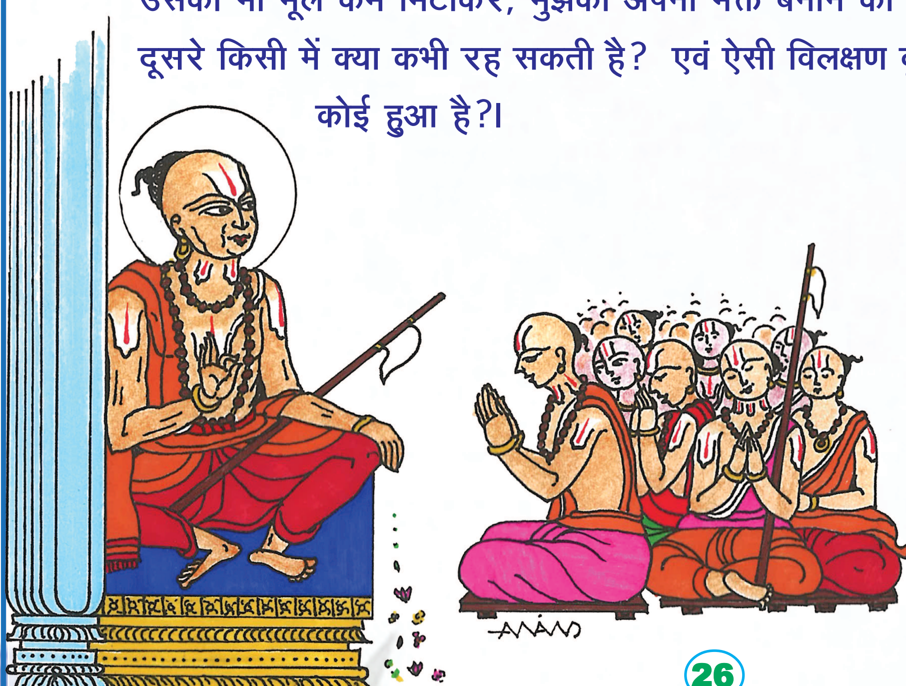

पुत्रदारगृहक्षेत्रादि सांसारिक क्षुद्रविषयों में फँसकर श्रेय का मार्ग नहीं जाननेवाले संसारी जीवों पर कृपा करके श्रीरामानुज स्वामीजी अपना भक्त बनाते है।

क्रमशः

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुमल
श्री वेंकटेश्वरस्वामीजी का वार्षिक ब्रह्मोत्सव

३०-०९-२०१९ से
०८-१०-२०१९ तक

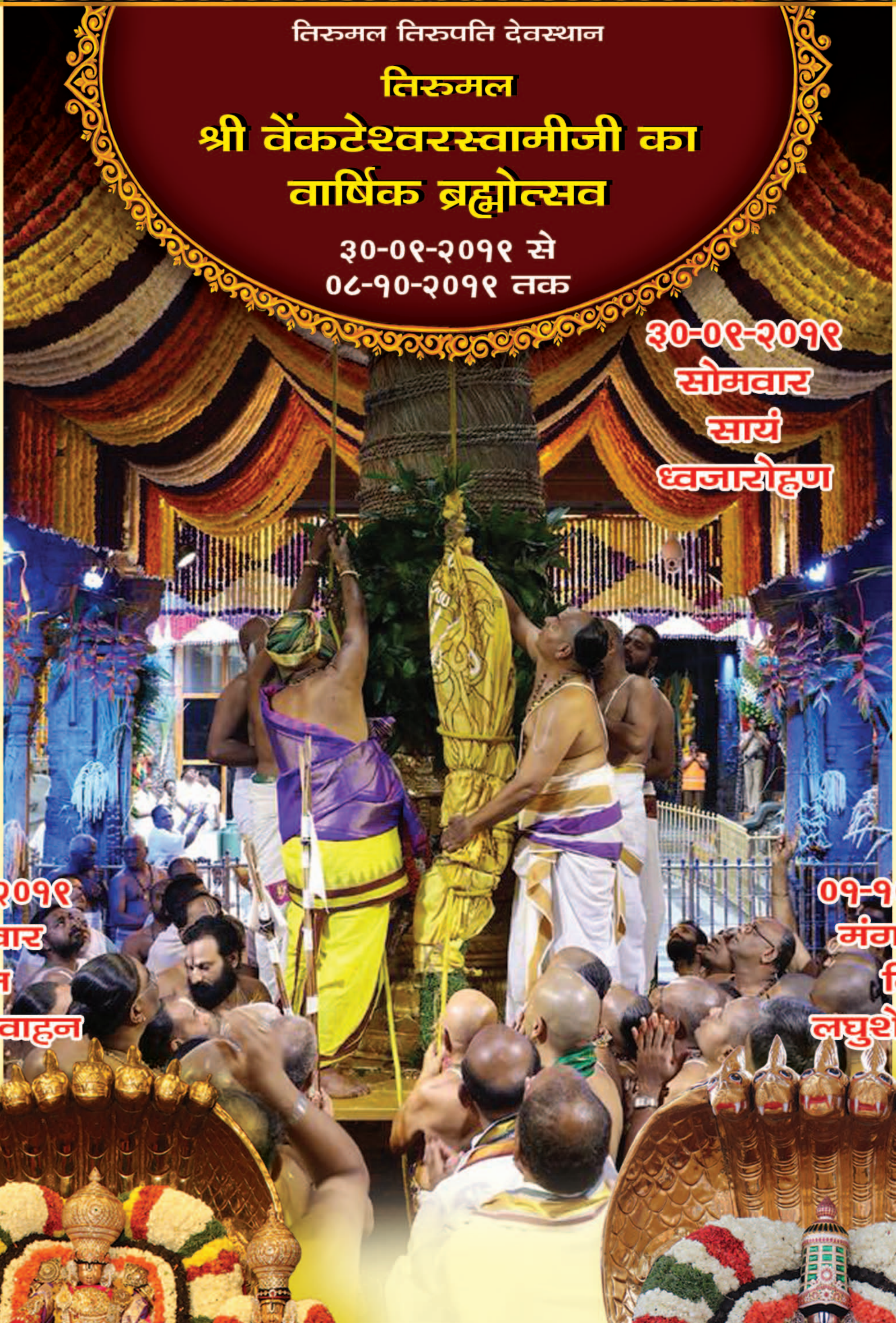

३०-०९-२०१९
सोमवार
सायं
ध्वजारोहण

३०-०९-२०१९
सोमवार
रात
महाशेषवाहन

०१-१०-२०१९
मंगलवार
दिन
लघुशेषवाहन

०१-१०-२०१९
मंगलवार
रात
हंसवाहन

०२-१०-२०१९
बुधवार
रात
मोतीवितानवाहन

०३-१०-२०१९
गुरुवार
दिन
कल्पवृक्षवाहन

०२-१०-२०१९
बुधवार
दिन
सिंहवाहन

०३-१०-२०१९
गुरुवार
रात
सर्वभूपालवाहन

०४-१०-२०१९
शुक्रवार, दिन
पालकी में मोहिनी अवतारोत्सव

०५-१०-२०१९
शनिवार
दिन
हनुमंतवाहन

०५-१०-२०१९
शनिवार
दिन
स्वर्ण रथोत्सव

०५-१०-२०१९
शनिवार
रात
गजवाहन

०६-१०-२०१९ रविवार
दिन
सूर्यप्रभावाहन

०८-१०-२०१९ मंगलवार
दिन - चक्रस्नान
०७-१०-२०१९
सोमवार
रात
अश्ववाहन
०६-१०-२०१९
रविवार
रात - चंद्रप्रभावाहन

श्री प्रपन्नामृतम्

(चौथा अध्याय)

मूल लेखक - श्री स्वामी रामनारायणाचार्यजी

प्रेषक - श्री रघुनाथदास रान्दड

(गतांक से)

एक समय अपने सभी शिष्यों को बुलाकर पं० यादवप्रकाशाचार्य बोले-सभी पण्डित मुझे सर्वश्रेष्ठ विद्वान् मानते हैं यह आप लोगों को भी ज्ञात है। फिर मैं श्रुति का किस तरह विरुद्ध अर्थ कर सकता हूँ? सभी वेदज्ञ एवं वेदान्ती पण्डित मुझे उचित आदर देते हैं, किन्तु उस ब्रह्मराक्षस ने मुझे अपमानित कर दिया और सबों के सामने अल्पज्ञ रामानुज की पूजा हुई। इस बात को स्मरण करके मुझे बहुत दुःख होता है कि मेरी ही सन्निधि में पढ़कर रामानुजजी मेरे श्रुत्यर्थों को अशुद्ध बतलाने वाला मेरा शत्रु बन बैठा है। यह महायशस्वी केशवाचार्य का पुत्र मेरे मत का मानों खण्डन करने के ही लिए अवतरित हुआ है। अतः मेरी समझ में नहीं आता है कि अपने शत्रु रामानुजजी का किस तरह वध करूँ।

पण्डित यादवप्रकाशाचार्य को खिन्न देखकर उनके शिष्य बोले - ''आचार्य! हम लोगों के रहते आपको सोचने की आवश्यकता नहीं। हम लोग ही किसी न किसी दिन उसका वध कर डालेंगे!'' शिष्यों की वाणी सुन हिताहित का समन्वय करने वाला यादवप्रकाश बोला-हम गंगास्नान के बहाने से रामानुज को लेकर प्रयाग चलेंगे और वहीं उसे सर्वपाप प्रणाशिनी त्रिवेणी में फेंककर ब्रह्म-हत्या से भी मुक्त हो जायेंगे। यादवप्रकाश की यह वाणी सुनकर उसके प्रिय शिष्य रावण की प्रशंसा करने वाले राक्षसों की तरह उसकी प्रशंसा करने लगे।

तदन्तर छात्रों द्वारा बुलाकर लाये गये रामानुजाचार्य को देखकर यादवप्रकाशाचार्य बाह्य प्रेमपूर्वक कहने लगा- ''महाप्रज्ञ रामानुज! तुम्हें शिष्य समझकर मैंने शिक्षा दी और उसीसे क्रुद्ध होकर तुमने पढ़ने आना भी छोड़ दिया। तुम्हें मैं अपने सभी प्रिय शिष्यों से अधिक मानता हूँ। रामानुज! पर्वत श्रेष्ठ मेरु एवं कामधेनु की तरह तुम्हारी कीर्ति संसार में फैलेगी और मेरी कृपा से तुम पूर्ण विद्वान् बनोगे। तुम्हारे वियोग में मैं हमेशा सोचा करता था।'' यादवप्रकाश की उस विषपूर्ण मधुर वाणी को सुनकर रामानुजाचार्य उसे ही सत्य मानकर फिर से यादवप्रकाशाचार्य की सन्निधि में अध्ययन करने लगे।

एक दिन छली यादवप्रकाश रामानुजाचार्य से बोला- ''रामानुज! माघ मास में गंगा का स्नान स्वर्गादि सभी फलों को देने वाला माना गया है। मैं शिष्यों के साथ स्नान करने प्रयाग जाऊँगा। मैं चाहता हूँ कि तुम भी मेरे साथ चलो।'' यादवप्रकाशाचार्य की बातें सुनकर माता से आज्ञा

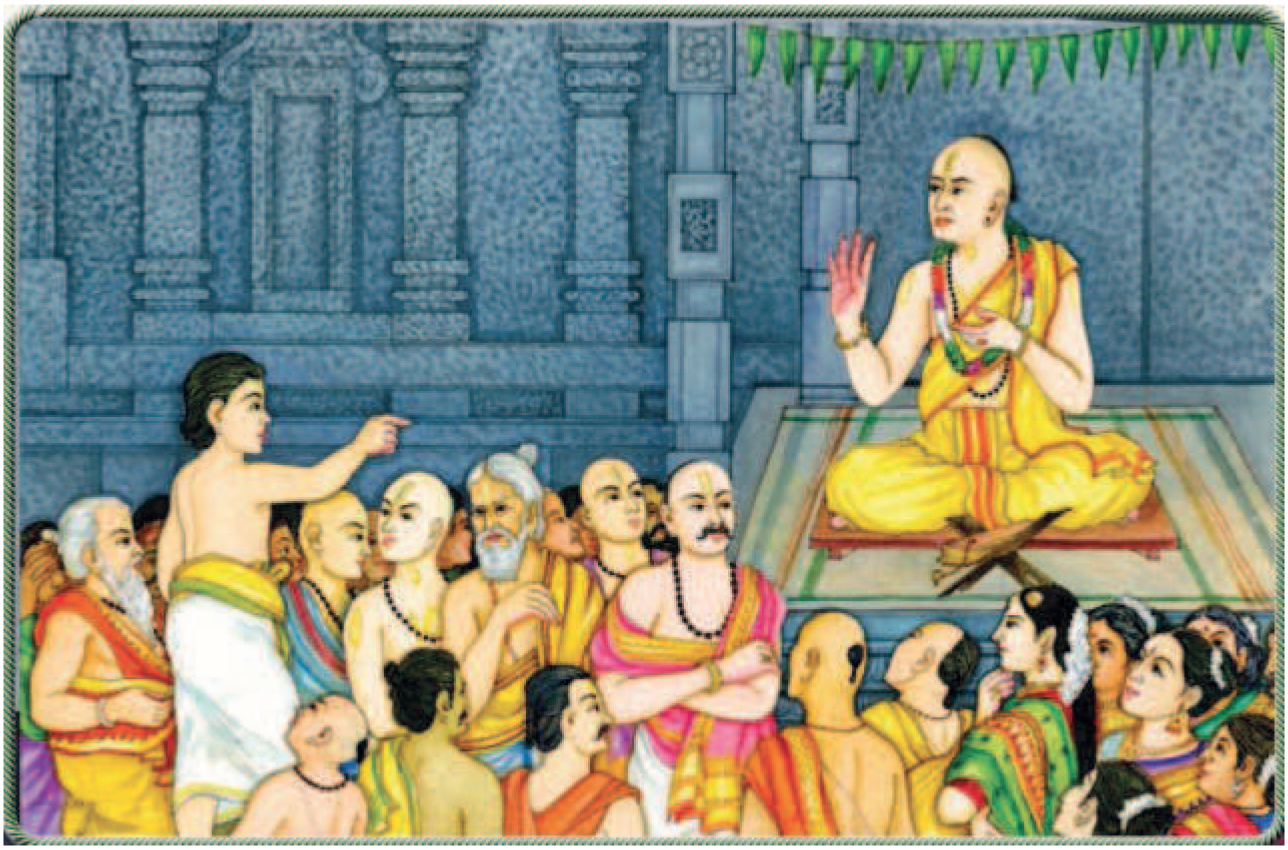

लेकर भगवत्पाद रामानुजाचार्य भी प्रयाग में गंगा-स्नान करने के लिए चल दिये।

यादवप्रकाशाचार्य की कुटिलता से अनभिज्ञ गोविन्दाचार्य सारी बातें बता देने की इच्छा से रामानुजाचार्य के साथ चल दिये। एक दिन हिंसक पशुओं से परिपूर्ण जंगल में रामानुजाचार्य को छोड़कर यादवप्रकाश आगे दिये। भाई को आते देखकर गोविन्दाचार्य सौहार्द्र के कारण खड़े हो गये और रामानुजाचार्य के सन्निकट आने पर बोले कि- ''भैया! गंगा-स्नान के बहाने यादवप्रकाशाचार्य आपको अपने साथ मारने के लिए रहे हैं। अतः आपको रुक जाना चाहिये।'' गोविन्दाचार्य की यह बात सुनकर विश्वस्त श्रीरामानुजाचार्य रास्ता छोड़कर एक पेड़ के नीचे भगवान का स्मरण करते हुए बैठ गये। घनघोर वर्षा से पीड़ित यादवप्रकाशाचार्य भीगते हुए किसी तरह अपने गन्तव्य तक पहुँच पाये। रास्ते में अकेले गोविन्दाचार्य को आते हुए देखकर यादवप्रकाशाचार्य क्रोध एवं प्रेमपूर्वक बोले कि- ''तुम रामानुजाचार्य को कहाँ छोड़ आये? उनको छोड़कर तुम यहाँ नहीं आ सकते।'' यादवप्रकाशाचार्य को उत्तर देते हुए गोविन्दाचार्य बोले- ''श्रीमान्! रामानुजाचार्य हमसे पहले ही चल दिये थे, यही जानने के लिए आपके पास आया हूँ।'' इसके बाद छात्रों को बुलाकर यादवप्रकाशाचार्य बोले- ''वृक्षों से भरे रास्ते में रामानुजाचार्य को खोजकर आओ।'' यादवप्रकाशाचार्य की आज्ञा से रामानुजाचार्य को खोजकर लौटे हुए शिष्यों ने आकर बतलाया-''भगवन्! शीघ्रता पूर्वक चलकर हम लोगों ने अन्धकार पूर्ण पूरे जंगल में पता लगाया, किन्तु कहीं भी रामानुजाचार्य का पता नहीं चला।'' अपनी सफल योजना देखकर भीतर से प्रसन्न एवं ऊपर से दुःख का स्वाँग रचते हुए यादवप्रकाशाचार्य, गोविन्दाचार्य एवं अन्य शिष्यों के सामने दुःख प्रकट करके उस रात्रि को अपने जीवन एवं प्रतिष्ठा के कण्टक रामानुज को सदा के लिए समाप्त समझकर शान्तिपूर्वक सुख की नींद सोया।

।। श्री प्रपन्नामृत का चौथा अध्याय पूर्ण हुआ ।।

(क्रमशः)

भगवद्गीता और नौजवान

आत्म-शक्ति को जानो

तेलुगु मूल - डॉ.वैष्णवाँघ्रि सेवक दास

हिन्दी अनुवाद - श्री अमोघ गौराँग दास

धन की शक्ति के बारे सभी व्यक्तियों के पास जानकारी है। यहाँ तक कि बच्चे भी जानते हैं कि धन से दुनिया की अनेकों वस्तुओं को प्राप्त किया जा सकता है। इसी कारण लोग अधिक धन प्राप्त करने एवं धन की शक्ति को समझने का प्रयत्न करते हैं। धन की सहायता से विद्यार्थी विदेशों में मनचाही शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। अन्यथा, धन के अभाव में प्रायः विद्यार्थियों को सामान्य शिक्षा प्राप्त करके समझौता करना पड़ता है, यहाँ तक कि कई बार तो अचानक शिक्षा बन्द भी करनी पड़ती है। अनेकों व्यक्ति ऐसे हैं जो बहुत कठिन परिस्थितियों में शिक्षा प्राप्त करते हैं। वे धन की शक्ति को भली प्रकार समझते हैं। अतः वे पैसों के बारे में अत्यंत सूझ-बूझ से काम लेते हैं। धन के उपलब्ध होने पर ही धन के महत्व को समझना आवश्यक है, क्योंकि धन हाँथ से चले जाने पर उसके महत्व का वर्णन करने से कोई लाभ नहीं है। लेकिन धन की शक्ति, शरीर की शक्ति या बुद्धिमत्ता की शक्ति से बढ़कर एक बहुत बड़ी शक्ति है जिसे आत्मा की शक्ति कहते हैं। अधिकतर लोगों को उस आत्म-शक्ति के बारे में कुछ ज्ञात नहीं है।

इस जगत में सदैव के लिए इतिहास रचने वाले सभी महान व्यक्तियों ने जाने या अनजाने में इस आत्म-शक्ति का अनुभव किया है। इस तथ्य को समझना सभी के लिए आवश्यक है। महानतम सफलता एवं बुद्धिमत्ता प्रदान करने वाली पुस्तक, भगवद्गीता का प्रारंभ इस आत्म-शक्ति के विवरण से ही होता है। गीता द्वारा इसे सूचित किये जाने के कारण हमें एसा नहीं सोचना चाहिए कि यह मात्र एक दार्शनिक उपदेश है। वास्तव में आत्म-शक्ति का ज्ञान गीता से प्राप्त एक अनुपम भेंट है। इस विषय में, शास्त्रों में वर्णित एक कथा प्रस्तुत है। एक बार एक ज्योतिषी ने एक अत्यंत निर्धन व्यक्ति के पास जाकर उसके निर्धन होने का कारण बताया। ज्योतिषी ने उसे इस बात से अवगत किया कि उसके पिता उसके लिए असीमित संपत्ति छोड़ कर गये हैं, किन्तु इस बारे में उसे कोई जानकारी न होना ही उसकी निर्धनता का कारण है, अन्यथा वह एक अत्यंत धनवान व्यक्ति है। ज्योतिषी ने आगे कहा ''वह असीमित संपत्ति यहीं है, लेकिन यदि तुम उसे पाने के लिए दक्षिण दिशा में खुदाई करोगे तो ततैया एवं मधुमक्खियाँ तुम पर आक्रमण कर देंगी; पश्चिम दिशा में खोदने पर भूत तुम्हें निगल जायेंगें; उत्तर दिशा में खोदने पर एक बड़ा सर्प डस कर तुम्हे मार देगा। केवल पूर्व की ओर खोदने पर तुम्हें वह संपत्ति प्राप्त हो सकती है।'' अर्थात निर्धन व्यक्ति के द्वारा उस संपत्ति की ओर बढ़ने के लिए सही मार्ग का ज्ञान होना आवश्यक था। ठीक इसी प्रकार, भगवद्गीता द्वारा आत्म-शक्ति का विस्तृत ज्ञान एवं उसे प्राप्त करने की उचित जानकारी प्राप्त होती है। सामान्यतः सभी व्यक्तियों के द्वारा गीता के संदेश को एक दार्शनिक आलेख समझे जाने के कारण वे आत्म-शक्ति की असीमित संपत्ति को प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं। इसी कारण सभी लोग निर्धन एवं शक्तिविहीन स्थिति में रहते हैं।

''यह आत्मा न तो कभी किसी शस्त्र द्वारा खण्ड-खण्ड किया जा सकता है, न अग्नि द्वारा जलाया जा

सकता है, न जल द्वारा भिगोया जा सकता है और न ही वायु द्वारा सुखाया जा सकता है।'' (भगवद्गीता २.२३)

''आत्मा अखंडित तथा अघुलनशील है। इसे न तो जलाया जा सकता है, न ही सुखाया जा सकता है। यह शाश्वत, सर्वव्यापी, अविकारी, स्थिर तथा सदैव एक सा रहने वाला है।'' (भगवद्गीता २.२४)

इस प्रकार गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने आत्म-शक्ति का विस्तृत वर्णन किया। किसी व्यक्ति की मृत्यु होने पर उससे संबंधित सभी लोग रोते हैं। वे यह भी कहते हैं कि अब आत्मा उस शरीर को छोड़कर चला गया है। अतः आत्मा का शरीर से चला जाना सभी के लिए शोक का कारण है और उसका शरीर में उपस्थित रहना आनंद प्रदान करता है। लेकिन क्या सभी लोगों का एसा अनुभव है? नहीं। किसी वस्तु का मूल्य उसके खो जाने पर ही ज्ञात होता है। लोगों को धन का महत्व अत्यधिक धनविहीन होने पर ही समझ में आता है। बाह्य रूप से दिखाई देने वाली शरीर, मन एवं बुद्धि की शक्तियाँ, वास्तविक शक्ति का केवल १०% अंश हैं। शेष ९०% अंश आत्म-शक्ति है। आज, मनुष्य आत्म-शक्ति के इस अद्भुत् अंश से वंचित है। तब, प्रश्न यह उठता है कि आत्म-शक्ति को कैसे समझा और प्राप्त किया जाये? इसके लिए मन के सभी संदेहों एवं बुद्धि के सीमित परिप्रेक्ष्य को दूर रखते हुए, अपने वास्तविक आत्म-स्वरूप को समझ कर आत्म-शक्ति का अनुभव पाने की तीव्र-इच्छा उत्पन्न करनी चाहिए। आत्म-शक्ति के अनुभव की तीव्र-इच्छा एक बीज के तुल्य है। यदि इस बीज को पृथ्वी में डालकर पानी से सींचा जाये, तो कुछ दिनो में, पौधों का उगना प्रारंभ हो जायेगा। हमारी आत्मा या चेतना पृथ्वी की भाँति है। चेतना की उपजाऊ भूमि में किसी भी इच्छा के बीज को बोया जा सकता है, फिर केवल उस इच्छा के अनुकूल कार्यों को करने की आवश्यकता होती है। तब हमें निर्धारित लक्ष्य की ओर संचालित करने वाली आत्म-शक्ति जाग्रत हो जाती है। इस कार्यविधि में विश्वास उत्पन्न करने के लिए पहले इसका प्रयोग छोटे-छोटे लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए करना चाहिए। इससे भविष्य में जीवन के बहुत बड़े लक्ष्यों को आत्म-शक्ति की सहायता से सरलता पूर्वक प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिए आत्म-शक्ति, महान ग्रंथ भगवद्गीता के द्वारा मनुष्यों को दिया गया, एक अनुपम उपहार है।

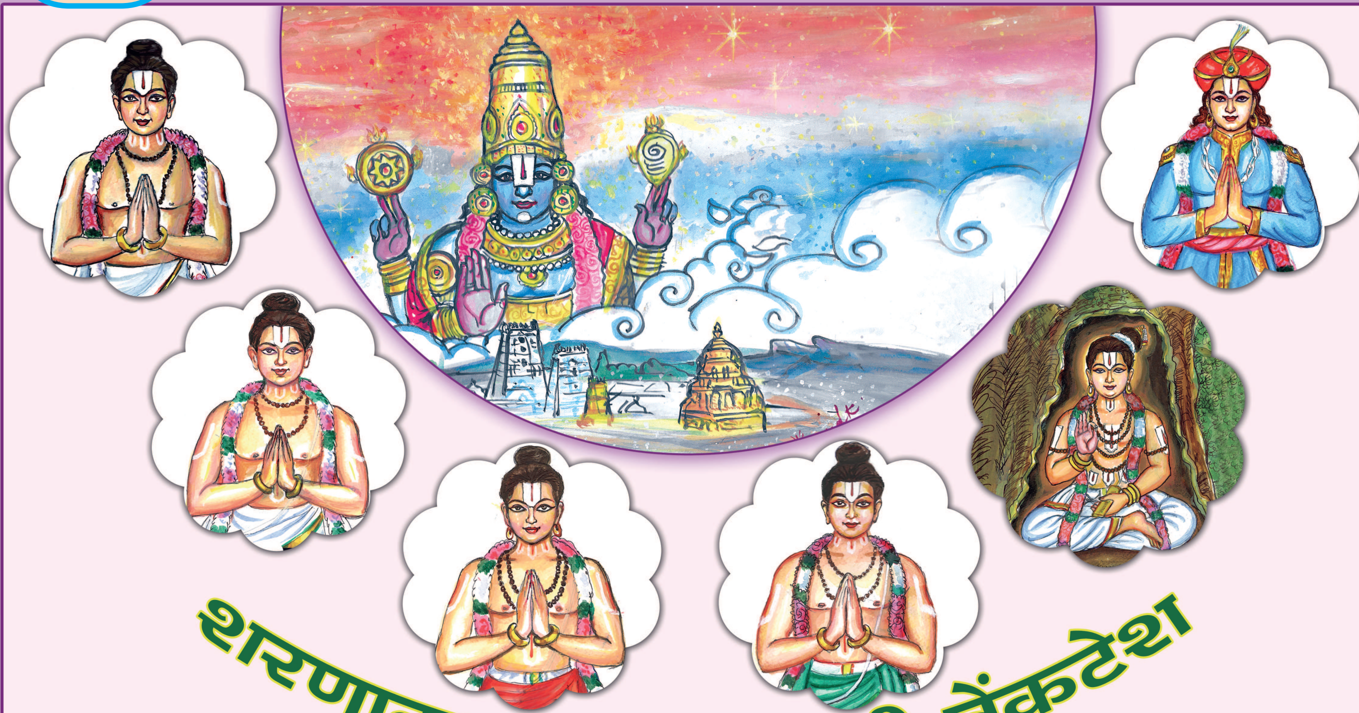

शरणागत वत्सल - श्री वेंकटेश

तेलुगु मूल - श्री महाभारतम् गुरुस्वामिनायुडु

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.श्रीनिवासुलु

आल्वारों के दिव्य प्रबंधों में स्पष्ट रूप से प्रस्तावित किया गया है कि - पहले ''वेंगडं'' का अर्थ है कि - 'पहाड', ''वेंगडमुडैयान्'' का अर्थ है कि 'गिरिनाथ' या 'पर्वतराज।'

ये आल्वार अलग-अलग कालों में थे। अलग-अलग राष्ट्र के थे। अलग-अलग जाति, कुलों से संबंधित है, अलग-अलग वृत्तियों में रहे थे। इनमें राजाएँ (कुलशेखर आल्वार), नायक (तिरुमंगै आल्वार), अर्चक (पेरियाल्वार), सामंत (नम्माल्वार), योगियों में (पोय्गै, पूदत्त, पेयाल्वार) थे। ब्राह्मण, शूद्र भी थे। उनके प्रबंधों के द्वारा अपने-अपने वृत्ति-प्रवृत्तियों का पता चला। इन्होंने दक्षिण भारत देश में अलग-अलग विष्णु क्षेत्रों का संदर्शन करके, वे जहाँ-तहाँ दर्शन किये विषयों के बारे में रम्य, सरस रूप में वर्णन किये हैं। इसका मुख्य उद्धेश्य यह था कि प्रासंगिक क्षेत्रों में रहे विष्णुमूर्ति, अर्चामूर्ति स्तोत्रों के साथ क्षेत्र का परिचय दिलाना है। वे अपने-अपने वृत्तियों का निर्वहण करते हुए, अपने खाली समयों में क्षेत्र पर्यटन किया करते थे। काम छोडकर गाँव-गाँव चक्कर लगाना उनका उद्धेश्य नहीं था।

सभी आल्वार दर्शन किये हुए प्रांत दो ही है। वे वेंगडं (तिरुमल), तिरुवरंगं (श्रीरंग) हैं। आल्वारों ने इन क्षेत्रों का संदर्शन करने पर वहाँ के क्षेत्र वैशिष्ट्य, प्रकृति संपदा को वहाँ के अर्चामूर्तियों को, उन मूर्तियों को किये जानेवाले उत्सव विशेषताओं को आदि सारे विषयों को अपने कवित्व में या पाशुरों में बताये गये हैं। इनको ''प्रबंध'' कहते हैं।

सब आल्वारों ने इस पर्वत को ''वेंगडं'' ही कहा था। केवल पेरियाल्वार के पाशुरों में एक जगह ''तिरुमल'' नाम दिखाई देता है। फिर भी यह पाशुर प्रक्षिप्त होने का अभिप्राय है। तिरुमल स्वामी को आल्वारों ने ''वेंगड'' (वेंकट, वेंगडवा-वेंगडत्तान्), वेंकटनाथ ने (वेंगडदोडय-

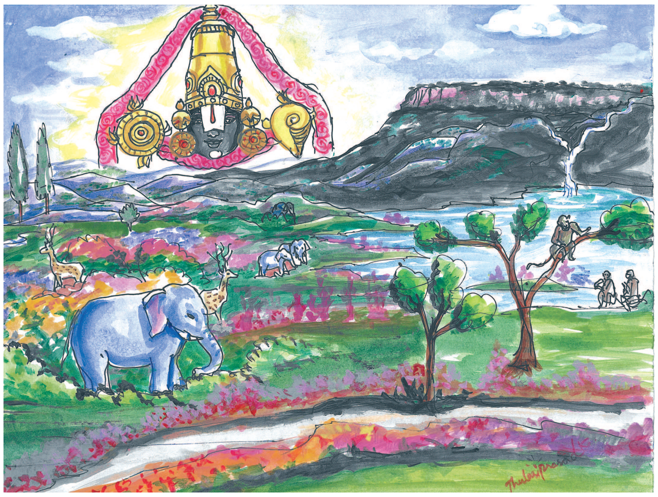

वेंगडमुडैयान्), वेंगडम में रहनेवाला (वेंगडत्तुमेयन्) कहा है। आज तिरुमल को रहे नामों में शेषाचल, सिंहाचल, नारायणाद्रि आदि जो हम जानते हैं ओ नाम आल्वारों को पता नहीं होगा। लेकिन विष्णु के नाम पर सारे आल्वारों में एकाभिप्राय है। ये सब विष्णुभक्त हैं। उनको सारे पुराणों से परिचित था। वेंकटाचलपति को विष्णुमूर्ति के नाम से पुकारे गये, मन भर विश्वास रखनेवाले हैं। उस दिन भी वेंगडं (वेंकटाद्रि) सुप्रसिद्ध विष्णुक्षेत्र होकर रहा होगा।

उन दिनों में वेंगडं उतना प्रख्यात हुआ है। आल्वारों की दृष्टि में पहाड ही पवित्र है। उन्होंने बताये हैं कि-पहाडों पर विराजित विष्णुमूर्ति की अर्चामूर्ति भक्तजनों को, भावुकों का उद्धार करने के मुख्य उद्धेश्य से ही वहाँ स्वयं प्रत्यक्ष कर लिया हैं। विष्णु भगवान के आयुध यानि शंख-चक्रों का उन्होंने उल्लेख किया हैं। भगवान जी धारण किये तुलसिमाला का वर्णन किये हैं। मुख्य देवता विष्णु का विवरण उसमें ज्यादा होने पर भी उन्हीं को वे ''राम, कृष्ण, पद्मनाभ, दामोदर'' आदि रूपों से देखा हैं। उनका विश्वास था कि सागर पर सोया हुआ नारायण ही वेंकटाचल पर स्थित भगवान है, मोहिनी के रूप में असुरों को धोखा दिया है, राम के रूप में रावण का वध किया है, कृष्ण के रूप में अर्जुन के भ्रम को दूर करके कर्त्तव्य का बोध किया है, त्रिविक्रम के रूप में तीनों लोकों का आक्रमण किया है, उनका विश्वास यही था कि ऐसे विष्णु भगवान वेंकटाद्रि पर अपना निवास स्थान बनवा लिया है। आल्वारों ने यह कहीं नहीं सूचित किये है कि उनकी (श्री वेंकटेश्वर स्वामी का) मूर्ति बातों के अनुसार वेंकटाचल पर स्थित भगवान स्वयंभू है - स्वयंव्यक्त है - खुद विराजित हैं।

पोय्गै, पूदत्त, पेयाल्वार ये तीनों का नाम पहले आल्वार है। उनका बहुत प्राचीन काल है। करीब दो हजार सालों के पहले हैं।

तोंडैनाडु - तोंडमंडलं उनकी मातृभूमि है। वहीं से वडनाडु (मध्यदेश) छोड कर वडनाडु (उत्तरदेश) को आने पर उनको महोन्नत, देखनेवालों को डर पैदा करने वाले वेंकटाद्रि पहुँचना उतना आसान नहीं है। उन दिनों में वेंकटाद्रि मलैनाडु (पहाडी प्रांत) मिला हुआ पहाडी प्रदेश है। आल्वारों के पाशुरों में वेंकटाचल वर्णन आँख देखा वर्णन मिलता है। महोन्नत, दुष्कर, बहुत तीखेपन, महान् पर्वत पंक्तियाँ, घना जंगल, बाँसकी लकडियों पर चलते आते हुए हाथियों का झुंड, उन्हे पकडने के लिए इधर-उधर चलते, दौडते गिरिजन, उनके संचार को रोकते हुए कहीं-कहीं दिखाई देनेवाले महान सर्प, शेर, बाघ आदि जानवरों को देखते हुए बहुत सहकर धीरे-धीरे पारकर आगे बढाते ज्यादा मील दूर तक पैदल चलकर पहाड की सीढियों को चढकर-उतरकर वेंकटनाथ के पास जाना है। आल्वारों ने इस स्वामी को देखने के लिए वहाँ तक गये हैं। वे कठिनाइयों का सामना करते हुए, हृदय को कठिन बनाकर राह पकडकर भगवान के सामने खडा होने के बाद उनको मिला समाधान को उनके पाशुरों में देख सकते हैं। तब उनको पहाड पर रहे प्रकृति सौंदर्य ही दिखाई पडा। मनोहर शैलपंक्ति, मन सुहानेवाले हवा, पेडों का झुंड समूह, आगे दौडकर आते हुए

काले बादलों का समूह, पहाडों के खाई से सुगंध भरित वातावरण को फैलाने वाले कई तरह के फूलों के पौधे, जहाँ-तहाँ बहुत जोर से दौडते हुए, कूदते हुए, जाते हुए झरनाएँ इस प्रकृति सौंदर्य उनके हृदय को लुभाया है।

पहाडों, पहाडों पर नदियाँ रम्यप्रदेश, ये सब आल्वारों के मन को नहीं लुभाया। पहाड पर स्थित, आविर्भूत स्वामी ने ही उनको वश में करके आकर्षित किया हैं।

श्री वेंकटेश्वर स्वामी ने अपने लिए इसी पहाड को अपना मूलस्थान बना लिया। इसलिए इसकी महिमा भी वैसे ही है। आल्वारों के काल में क्षेत्रमाहात्म्य और भी बाहर नहीं आया होगा। वेंगडं पर स्थित भगवान मुक्ति को प्रसादित करता है। पापों का हरण करता है। इन लोकों का और अन्य लोकों का प्रभु वही है। भक्तजनों के हित के लिए अपने-आप यहाँ प्रत्यक्ष हुआ है। आल्वार अपने हृदय भर इसी देवता का वर्णन किये हैं। उन्होंने इस भगवान को विष्णु का अवतार ही माना। वहीं तिरुवेंगडं पर खडा हुआ है। उनके वक्षःस्थल पर फूल मालाओं के बीच श्री महालक्ष्मी प्रकाशित हो रही है। वह तिरुवेंगड का प्रभु है। श्री वेंकट प्रभु श्रीमन्नारायण वही है। उस स्वामी अर्चामूर्ति बनकर रहते हुए देख उनका मन छोटे पहाड चढने की खुशी हुई है। सुंदर रूप से, ठीक से उन्नत वेंकटपति काले शरीर को, उस शरीर पर चंदन लेपन को, पूरे शरीर पर भरा हुआ फूल मालाएँ, कंठ में सुंदर ढंग से अलंकृत तुलसी मालाएँ, उस पर पीतांबर वस्त्र, चरणों पर फूल राशियाँ, जंगल में पहाडों में इधर-उधर भटकते हुए, फूलों को, फलों को तितर-बितर करने वाले वानर समूह, दूर में रहे गाँवों से यहाँ आकर सेवाएँ दे रहे लोग, उनमें पारायण दिन, मुक्कोटि व्दादशी के दिन कोलाहल भक्तजन लोग स्वामी को हजार नामों से कीर्तन करते हुए धूप-दीप पुष्पों को समर्पित करने के लिए आ रहे हैं। उन सबको स्वामी के चरणों के पास समर्पित करके साष्टांग नमस्कार कर रहे हैं।

फूलमालाओं से अलंकृत करके रह उस स्वामी का देह सबके शरीरों को पुलकित कर रहे हैं। तिरुमल पहाड पर आये सारे भक्तजन भक्ति से तन्मय होकर स्वामी की पूजा करते रहे।

चौथे तिरुमोलिशै आल्वार है। पहले तीनों आल्वारों के बाद आये हैं। इनका जन्म स्थल तिरुमलिशै (या) महीसारपुर है। आपने १४ पाशुरों में वेंगडं के बारे में बताये हैं। आज के वेंगडं का सौंदर्य पहले तीनों आल्वारों के द्वारा रचित विषय ही है। पहाड की पंक्ति, अरण्य, बाँस वृक्ष, लताएँ, पेड, फूल के पौधे, झरनाएँ, वनचर इन सबका उन्होंने विस्तार से वर्णन किये थे। आपने भी यहाँ इधर-उधर, तितर-बितर होकर चलनेवाले हाथियों को देखा था। वेंगडं पर रहनेवाले भगवान को वेंगडं, तिरुवेंगडत्तान, वडवेंगडत्तान के नामों से पुकारते थे। उनकी दृष्टि में इस भगवान विष्णुमूर्ति ही है। लक्ष्मी देवी के पति ही कहा था। मोदलाल्वारों ने इस भगवान को मंदिर रहने की बात का प्रस्ताव नहीं किया है। इन्होंने इस मंदिर में कौन सा भगवान है, कौन है इस बात को स्पष्टता से लिखा है। सारे ओर बहुत घना-जंगल है। जहाँ भगवान खडा है वहाँ तक (जंगल) पेडों को काट कर, पैदल चलने का रास्ता बनवाये थे। लेकिन उन्होंने बताये हैं कि - पेडों को स्वयं खुद काटकर रास्ता बनवाकर हमें कृपा किये थे। हमारी भलाई के लिए हमारे ऊपर कृपा करके पेडों को काट कर रास्ता बनवाकर इस भगवान ऊँचाई प्रदेश पर अपने चरणों को रख कर खडा हुआ है।

भक्तजन उन चरणों पर फूल अर्पित कर रहे हैं। ऊँचाई स्थल पर खडे स्वामी को हर दिशा से देख सकते हैं। इतना ही नहीं उन्होंने कहा कि- ठंडे, मीठे पानी से

भरा झरनों के बीच आविर्भूत वेंगडं देवताओं को और मानवों के लिए सेवित योग्य है।

यानि इसका अर्थ यह है कि भगवान मंदिर में नहीं है। पत्थर पर एक मंटप में रहा होगा। उन दिनों में देवताओं के लिए मंदिर बनवाना एक संप्रदाय के रूप में रहा था। फिर भी श्री वेंकटेश्वरस्वामी को मंदिर बनवाकर चार दीवारों के बीच उस स्वामी के प्रकाश को बंद नहीं कर पाये हैं। कोई भी, किसी जगह के भी, कभी भी इस वैभव को देखकर, स्वामी चरणों पर स्वयं फूल चढाकर, पूजा करके खुश होने की सुविधाजनक रास्ता आल्वारों में था। उन दिनों में वहाँ किसी काम नियमित विधान से चलाने का कोई भी आधार नहीं है। भक्तजन अपनी इच्छा के अनुसार स्वामी की पूजा करते रहे। पहाड पर हाथियों का झुंड़ रहते थे। ''कुरव'' जाति के लोग उन दिनों में स्थानिकों के रूप में रहते थे। ये गाँव के लोग हो सकते हैं। इन्होंने जंगल के वन्य मृगों को हाथियों को पकडकर उनके द्वारा काम करवाते थे। पहाड की चढाई, ऊँचाई चढाइयों आदि पर वे निवास करते थे। पहले पहाड पर रहने वाले ''वड्डे लोगों'' जो आदिवासी थे, उनको हराकर, भगाकर, उन सारे प्रदेश का आक्रमण करके, ये कन्नडप्रदेश से वहाँ गये हैं। पहले इनके लिए कोई प्रभु नहीं थे। झगडे बढने से ''कोमंदु कुरुवप्रभु' नामक व्यक्ति उन लोगों का रक्षक बन गया था। यादवराजाओं की संतति आरंभ होने तक इसी प्रकार रहा था। कहते थे कि ये पल्लव है। इतना ही नहीं आल्वारों के पाशुरों में कुरव लोगों और पल्लवों के बीच जब विरोध पैदा हुआ है उन सारे बातें निक्षिप्त हैं। गिरिजन जाति के ये ''कुरव'' हैं। क्रमशः इन्होंने जो खेतीबारी सीखी है ये बातें भी आल्वारों के पाशुरों में हैं। इनके व्यवसाय में ''कोर्र'' (धान्य) फसल की खेतीबारी शामिल हैं।

बेरदेश में कोल्लि नगर में दृढव्रत राजा का पुत्र कुलशेखर आल्वार ऊपर कहे गये चार आल्वारों से ४०-५० साल छोटा है। इतने दिनों के बाद वेंगडं चर थोडे परिवर्तन हम देख सकते हैं। थोडे लोगों का विश्वास है कि- कंबक नामक पेड, चमेली वृक्ष के चिह्न के अलावा वे 'पेरुमाल तिरुमोलि' नामक ग्रंथ रचना करते समय पेडमंदिर रहा होगा। वेंगडं में 'नीलवालल्' नामक बडे दरवाजा के प्रस्ताव को, वे बाद के जन्म में वेंगडं प्रभु के मंदिर का देहलि (कडप मानु) ड्योडी के रूप में पैदा होने की इच्छा को लिखने के द्वारा यह सूचित हुआ कि- उन दिनों में छोटा मंदिर रहा होगा। अर्चक महद्वार के यहाँ से बडी ड्योडी के पास से अंदर अर्चनादि किया, होगा, भक्तजन महद्वार के बाहर खडे होकर पूजाओं का निर्वहण करने का विषय ''वेंगडक्कोन में ४,३ पाशुरों में व्यक्त हुआ है। और एक पाशुर में इस मंदिर की ड्योडी के बारे में प्रस्ताव किये गये पद हैं। हमें यह पता चलता है कि- ''मंदिर की ड्योडी यानि देहलिग (कडपमानु) के पास रहने वालों को श्री वेंकटेश्वर स्वामी के पगड, नव किसलय रूप के मुँह को हमेशा देखने का सौभाग्य जरूर मिलने का कुलशेखर आल्वार का मन व्यक्त होता है। आज भी मंदिर की ड्योडी कडपमानु (देहलि) को कुलशेखरपडि ही कहे जा रहे हैं।

कुलशेखर के ३०-४० सालों के बाद पांड्य देश में नम्माल्वार नामक आल्वार ने बताया कि - सारे लोगों को समान रूप से शरण देने वाला प्रभु वेंकटप्रभु ही है, महा मायावि, वैकुंठनाथ, नित्यशुरु स्वामी ठंडे वेंगडं पर दिखाई दे रहा हैं। उनकी दृष्टि में इस पहाड पवित्र है। वैकुंठ के समान है। एक प्रकार से वैकुंठ से ज्यादा भी है। सारे पापों का नाश करने वाला पहाड है। फन को उठाकर सोये हुए स्वामी के जैसे रहे पहाड के चिह्नों को इन्होंने पहचान ली है। इसके द्वारा हमें पता

चलता है कि इस पर्वत को आदिशेष मानकर उन दिनों में ''शेषाचल'' के नाम से पुकारते हैं। एक नियमित नीलमेघ रूप में मनोहर रूप से इस पर्वत पर रहे भगवान नारायण ही है, परम है, देवादिदेव, जगतकारण, लक्ष्मीरमण ही हो सकता है।

मेरे प्रभु ही ठंडे पहाड पर खडा हुआ है। तीनों लोकों का प्रभु है। तुझको, मुझको, सबके माता-पिता जैसे हैं। श्रीदेवी को वक्षःस्थल पर रखा हुआ है। जो लोग उनके चरण पकडते हैं उन भक्तजनों को हाथ देकर मुक्ति दिलाने वाला है। इसलिए अन्य देवताओं के शरण में नहीं जाने के लिए कहा हैं। ''बुढापे के पहले ही हर एक व्यक्ति वेंगडं पहाड पर चढकर वहाँ खडा हुआ भगवान को धूप, दीप, पानी आदि से पूजा करनी है। यह इनका प्रगाढ विश्वास है। जो लोग वेंगडं आयेंगे वे अपने आपको भूल जाना है। अपने बढप्पन को भूलकर आना है। अपने आपको भूलकर, जोर जोर से गोविंद नाम स्मरण करते हुए भगवान के सामने खडा होना है। यहाँ जाति-मतों का भेद नहीं है। मानव देवता के भेद भी नहीं है। इस इहलोक में जड, जीव दोनों समान ही है। इस वर्णना का परिशीलन करने पर पता चलता है कि - वेंगडं पहाड पर रहे मंदिर को कोई भी कभी भी आने-जाने का सौकर्य है। वहाँ भगवान की पूजा खुद करने का सौकर्य है।

इन्होंने वेंकटेश्वरस्वामी की मूर्ति का वर्णन किये हैं। उनकी दृष्टि में, भावना में वह निस्संदेह विष्णुमूर्ति ही है। शंख, चक्र, शारंग, गदा धारण किये मूर्ति अपने आश्रय में आये भक्तजनों को प्रत्यक्ष होकर शरणागत तत्व के बारे में व्यक्त करने की बात उन्होंने बताये गये हैं।

उन्होंने अर्चामूर्ति के वक्षःस्थल पर अलमेलुमंगतायर (लक्ष्मीदेवी) स्थित जानकर वे ऐसे लिखे हैं। उस मूर्ति के चरण महिमाओं, सौंदर्य के बारे में व्यक्त किये हैं। आल्वारों ने यह भी सूचित किये है कि - उस मूर्ति अकेले रहने पर भी उसमें तीनों (ब्रह्म, विष्णु, महेश्वर) निक्षिप्त हैं, लक्ष्मीदेवी स्वामी में ही आश्रय पायी हुई है।

इसी प्रकार सभी आल्वारों को श्री वेंकटेश्वर स्वामी के अर्चावतार, भक्तजनों पर करुणा प्रसारित करने के लिए खुद स्वामी इस रूप में प्रत्यक्ष हुआ है। उनकी सप्ताह यह था कि भक्तजन अपने को शांति, तृप्ति मिलने तक योग्य रूप का इसी मूर्ति की पूजा करनी है।

उनका दृढ विश्वास था कि किसी भी स्वामी की प्रार्थना करने पर, पूजा करने पर भी वह श्री वेंकटेश्वर स्वामी को ही मिल जायेगा। श्री वेंकटेश्वर स्वामी की सेवा करने वाले भक्तजन अपनी इच्छानुसार पूजा करने की रीति है। ''भगवान के नामों का कीर्तन करते हुए, स्वामी के सामने दीप जलाकर, धूप लगाकर, अर्चामूर्ति के चरणों को पानी से धोकर, फूल चढाकर, गंध का लेपन करके नमस्कार कर रहे हैं'' ऐसे प्रस्ताव उनके पाशुरों में कई बार दिखाई देता है। और यह भी कहा था कि- ''भक्ति से कई तरह के फूलमालाओं को बनाकर, दूध से बनाये गये मिठाइयों से इड्ली के जैसे कुडुमों से मालाएँ बनाकर अर्चामूर्ति को अलंकृत किये जानेवाले पद्धति को यहाँ देख सकते हैं। इन्होंने मान लिये कि भक्तजनों को सलुपु पूजा ही प्रमुख है। वेंगडं का अर्थ वास्तव में हमारे शरीर ही है।

इस प्रकार आल्वारों ने अपने पाशुरों में व्यक्त किया है कि ''तिरुमल पहाड पर रहनेवाले स्वामी ही हमारे परदेवता हैं।'' आल्वारों के जैसे हम सब उस पहाडी देवता के आश्रय लेकर धन्य हो जायेंगे।

दिव्यक्षेत्र तिरुमल

तेलुगु मूल - श्री जे.बालसुब्रह्मण्यम्

हिन्दी अनुवाद - श्री पी.वी.लक्ष्मीनारायण

१. तिरुमल-क्षेत्र

''सत्यं सत्यं पुनस्सत्यं न देवो वेंकटेश्वरात्

ब्रह्मांडे नास्ति यत्किंचित् न भूतं न भविष्यति।।''

- श्रीवेंकटाचलमाहात्म्यम् (भविष्योत्तरपुराणम्)

बात पक्की और सत्य की बात है! एक बार नहीं; दो बार नहीं बार-बार दोहराने वाली सत्य की बात है! वह निराले सत्य की बात यह है -

श्री वेंकटेश्वर के सरीखा देव इन ब्रह्मांडों में और कहीं नहीं है; नहीं है! आज ही नहीं, बल्कि, बीते हुए भूतकाल में, इस ओर आने वाले भविष्यकाल में भी नहीं है! नहीं है और नहीं भी होगा!!

इसी कारण श्री वेंकटेश भगवान कलियुग के प्रत्यक्ष देव के तौर पर सराहा गया है।

''कृतेतु नरसिंहोऽ भूत् त्रेतायां रघुनंदनः

द्वापरे वासुदेव श्च कलौ वेंकटनायकः।।''

कृतयुग में नरसिंह, त्रेतायुग में श्रीराम, द्वापरयुग में वासुदेव (श्रीकृष्ण), कलियुग में श्री वेंकटेश्वर - ये चार अवतार चार युगों में प्रसिद्ध हुए हैं।

इनमें पहले के तीन अवतार, श्री महाविष्णु के दशावतारों में कहे हुए ही हैं। मगर विचित्र! वह यह कि कलियुग में श्री वेंकटेश्वर अवतार के तौर पर विशेष रूप से कहा हुआ होना है। विलक्षण है न यह!!

वे तीन अवतार भी - उन-उन युगों में उन-उन रक्कसों का संहार कर धर्म की स्थापना करने-हेतु धरे अवतार मात्र हैं। मगर, श्रीनिवास के अवतार का संभव ऐसा नहीं हो पाया। श्रीवैकुंठ से साक्षात् रूप से उतरा हुआ दिव्य मंगल अर्चावतार मूर्ति है - श्री वेंकटेश्वर!!

२. श्री वेंकटेश्वर-अवतार

श्री महाविष्णु प्रत्यक्ष ढंग से श्रीवैकुंठ से ''श्री वेंकटेश्वरस्वामी'' का अवतार बन कर इस धरातल पर उतर कर आने के इस कलियुग के लक्षण ही प्रधान कारण हैं।

अन्य युगों के मानवों से भी कलियुग में मनुष्य अल्पायुष्क ही नहीं, बल्कि, कमजोर भी है। इतना ही नहीं, कलियुग के मानव का मन ईर्ष्या, असूया, द्वेष, लोभ,

अहंकार आदि दुष्ट लक्षणों से खूब कलुषित होता रहा है। चंचल बन भी रहा है। इतने दोषों से युक्त आज का आदमी, अन्य युगों की तरह, सीधे वैकुंठ के भगवान के जाने में असमर्थ व अशक्त बन रहा है।

इसीलिए भगवान कलियुग के अपने भक्तों के उध्दार के लिए श्रीवैकुंठ महालोक को त्याग कर, 'श्री वेंकटेश्वर' नाम से भूलोक पर उतर आया हुआ है, जिस कारण उस स्वामी को ''कलौ वेंकटनायकः'' नाम की प्रसिद्धि मिल पायी है। कलुषों से ओत-प्रोत इस कलियुग में भक्तों की रक्षा कर, उनकी इच्छाओं की पूर्ति कर सकने वाले ''एक-ही-एक अकेला नायक, एक-ही-एक अकेला आसरा और सहारा मैं ही हूँ!'' कहते हुए भगवान श्री वेंकटेश्वर नाम से अर्चामूर्ति बन कर अवतरित हो पाया है!!

३. भूलोक वैकुंठ-तिरुमल

इस तरह अवतरित होते हुए, वैकुंठ की गिरियों, तरुओं, सरोवरों, उभयदेवेरियों - श्रीदेवी, भूदेवियों, गरुत्मान् आदि सेवकों के साथ श्री महाविष्णु निकल आया था। इस प्रकार उस वैकुंठ से पधार कर भुवि पर, इधर यहाँ ''श्री वेंकटेश्वर'' नाम से दर्शन देते हुए खड़ा हुआ दिव्य स्थल ''भूलोक का वैकुंठ'' नाम से भासित हो रहा है। वही ''तिरुमल'' पुण्यक्षेत्र हैं!!

४. अतिलोक सुंदर-आनंदनिलय

श्रीवेंकटेशमति सुंदर मोहनांगम्
श्रीभूमिकांत मरविंद दलायताक्षम्।
प्राणप्रियं प्रविलसत्करुणांबुराशिम्
ब्रह्मेश वंद्य ममृतं वरदं भजामि।।

आनंदनिलय स्वामी सबको सम्मोहित करने वाला सुंदरांग महापुरुष है। उस स्वामी के पद्म-जैसे नेत्र होते हैं। वह देवदेव श्रीदेवी-भूदेवियों से मिल कर होता है। वह अत्यंत प्राण-प्रद होता है। करुणा का सागर जो है। जिस स्वामी की महिमा का विशुद्ध गायन ब्रह्म, शिव आदि देव स्मरण करते रहते और जो मोक्ष-प्रदाता महापुरुष है, ऐसे महान् देवाधि देव श्री वेंकटेश का मैं भजन - कीर्त्तन करता हूँ।

इतने सुंदर देव, **''मैं वैकुंठ को भी परित्यक्त कर रहूँगा, मगर, अपने भक्तों को छोड़ कर एक पल भी रह नहीं पाता हूँ!''** - कहते हुए वैकुंठ से उतर कर भूलोक में वेंकटाचल पर अद्भुत सालग्राम शिलामूर्ति बन कर, जिसके हृदय-फलक पर श्रीमहालक्ष्मी के स्वयंव्यक्त सहज रूप में आविर्भूत हुआ था। उस वक्षःस्थल-वासिनी महालक्ष्मी के निशान से ही भगवान बालाजी 'श्री'निवास बन पडा है!!

५. विचित्र भंगिमा

शिर पर किरीट, पवित्र यज्ञोपवीत, कमर पर लटके नंदक खड्ग के साथ ऊपरी दायें, बाएँ हाथों में शंख और चक्रों को धर कर, निचले दायें शुभ हस्त को वरद-मुद्रा में रख कर अपने भक्तजनों को इशारा दे रहा है कि वे इस कल्लोलित कलियुग में अपने चरण-द्वय की शरण लें!! ठीक इसी प्रयास में स्वामी निचले बाएँ हाथ को अपने कमर पर स्थापित कर, कटि-हस्त से अपनी घुटना दिखाता है। अचंभी इस भंगिमा में, अपने खड़े हुए इस प्रांत को ही साक्षात श्रीवैकुंठ भक्त समझने का संकेत देता है। इतना ही नहीं, मेरे इस चरणों की शरण लेने से, बस, भक्तों को ''संसार-सागर समुत्तरणैक सेतो'' (परिवार-रूपी या संसार-रूपी समुंदर से पार कराने वाला सेतु) बन कर वारिधि बन कर, पारिवारिक समुंदर को घुटना-भर बना कर, अति अनायास ढंग से पार करा दूँगा! - यों

कहते हुए या आश्वासन दिलाते हुए 'कटिहस्त' से, आपके माँगे सब वरदानों का प्रसादन कर दूँ नाम के अंकन से 'वरदहस्त' दिखाते हुए - एक अनूठे सुंदर भंगिमा में खड़ा मूर्ति है सुड़ौल श्रीनिवास भगवान!!

६. पंचबेर (पाँचों मूर्तियाँ)

आनंदनिलय के गर्भालय में सालग्राम की शिलामूर्ति मूल-विराट के साथ-साथ श्रीनिवास स्वामीजी के और चार किस्मों की उत्सवमूर्तियाँ हैं, जिन्हें मूलमूर्ति से मिलाकर ''पंच-बेर'' बोलते हैं। मूलविराट स्थिर रूप से, ८ फुट ऊँची सालग्राम शिलामूर्ति को **ध्रुवबेर** कहते हैं। इस मूल ध्रुवमूर्ति की महिमा व आकर्षण से खिंच कर लोग तिरुमल-यात्रा पर आजाते हैं। इसी मूल-विराट् के ही प्रतिदिन प्रधानतया सुप्रभात, दो बार तोमाला की सेवाएँ, नाम पर पुष्पालंकरण-सेवा, उदयकाल में सहस्रनामार्चना, दोपहर और सायं अष्टोत्तरशतनामार्चनाएँ, तीन जून निवेदन किये जाते हैं।

हर मंगलवार अष्टदल-पाद-पद्माराधना, बृहस्पतिवार तिरुप्पावड़ा-सेवा, नेत्रदर्शन, रात्रि को पूलंगि-सेवा, शुक्रवार सुबह सुगन्ध परिमल द्रव्यों से अभिषेक किया जाता है। श्री स्वामीजी की अर्चनाएँ-निवेदनाओं के समाप्त होते ही, वक्षःस्थल पर विराजमान ''व्यूहलक्ष्मी'' की मनाते हैं। अब, दूसरा बेर-**भोगश्रीनिवासमूर्ति** मूलमूर्ति की नकलवाली चाँदी की प्रतिमा-रूपी इसी को मनवालपेरुमाल कहा जाता है। शुमार १½ फुट ऊँचाई वाली इस चाँदी की प्रतिमा का हर रोज उदयकाल में आकाशगंगा तीर्थाभिषेक, रात को शयन-सेवा, माने 'एकांत-सेवा' चलती है। इस स्वामीजी का हर बुधवार बंगारुवाकिली (स्वर्ण देहली) पर सहस्रकलशाभिषेक मनाया जाता हैं।

अब तीसरा बेर **'कोलुवु श्रीनिवासमूर्ति'** है। यह मूलमूर्ति के लिए नकल पंचलोह की प्रतिमा होती है। १½ फुट ऊँचाई में होने वाली इस मूर्ति का हर रोज बंगारुवाकिली के अंदर 'सोने के सिंहासन' पर पूजा और दरबार चलता है। पंचांग के श्रवण के पश्चात् आय-व्यय आदि हिसाब इसी स्वामी को निवेदित किया जाता है।

चौथा बेर (मूर्ति) **''उग्रश्रीनिवासमूर्ति''** है। श्रीदेवी-भूदेवी-समेत इस उग्रमूर्ति के पूर्व में उत्सव मनाये जाते थे। अब न हो रहे हैं। एक कार्तिक-कैशिका-द्वादशी के दिन मात्र ही प्रातःकाल सूर्योदय के पूर्व ही उत्सव पूरा कर मंदिर के अंदर चले जाते हैं।

पाँचवाँ बेर **उत्सव श्रीनिवासमूर्ति** है। ये ही मलयप्पस्वामी हैं, जो श्रीदेवी-भूदेवी-समेत उत्सव की मूर्ति हैं। कहा जाता है कि यह मूर्ति 'मलयप्पा-कोना', जो तिरुमलगिरि पर मौजूद है, इस कारण ये 'मलयप्पस्वामी' नाम से पुकारे जाते हुए, मंदिर के बाहर

सब उत्सवों में भाग लेते हुए, अपने भक्तों को दर्शन अति सन्निहित हो देते हुए रहते हैं।

इनके अलावा आनंदनिलय के गर्भालय में सुदर्शन चक्रत्ताल्वार, अनंत, श्रीसीतारामलक्ष्मण, श्री रुक्मिणी-श्रीकृष्ण, सुग्रीव-हनुमान, गरुत्मान, विष्वक्सेन आदियों की उत्सव की मूर्तियाँ उन-उन समयों में, अपने-अपने तौर पर नगरोत्सवों में या शोभा-यात्राओं में भाग लेती होती हैं। इनमें कुछ आज तीर्थ-देयी स्थल पर दरसे जाते हैं।

७. अचंभे नाम

तिरुमलेश के कई-कई व अनगिनत नाम हैं। वे सब अति विचित्र नाम हैं। यह कहा नहीं जाता कि ये नाम श्रीस्वामी के असली नाम हैं या कल्पित। मगर एक बात सच है - ये सारे नाम तो तिरुमलेश को अपने भक्तों के दिये हुए हैं, जो प्रेम व भक्तिपूर्वक पुकारे जा रहे हैं!! इन नामों से भक्तजन इष्टपूर्वक अपने स्वामी श्री वेंकटेश भगवान को पुकारते हैं।

भगवान बालाजी का सुप्रसिद्ध नाम है ''एडुकोंडलवाडा!!'' यह तो तेलुगु नाम है, जिसका अर्थ - ''सात पहाड़ोंवाला!!'' होता है। (१) शेषादि, (२) वेंकटाद्रि, (३)नारायणाद्रि, (४)गरुड़ाद्रि, (५)वृषाद्रि, (६)वृषभाद्रि, (७) अंजनाद्रि - ये सात हैं वे परबत जिनके अंतिम परबत शेषाद्रि पर स्वामी श्री वेंकटेश्वर विराजमान है। शेषाद्रि परबत को ही अनादिकाल से ''तिरुमल'' पुकारा जाता हुआ आ रहा है। तिरुमल द्राविड़ शब्द है। 'तिरु' का अर्थ होता है - 'श्री'; 'मला' का अर्थ है 'परवत'। तिरुमल द्राविडशब्द का ''श्रीपर्वत'' अर्थ होता है, जो महाविष्णु की परंपरा के लिए या वैष्णव तत्त्व के लिए भी ठीक जचता भी है। तिरुमल एक गौरव-सूचक शब्द है, जो भक्तों के द्वारा पूजनीय संभावना के अर्थ में पुकारा जाता है!!

इसी प्रकार - वें = पापों को, कटः = हटानेवाला - अतएव ''वेंकटपति'' या ''वेंकटेश्वर'' हो पाया है। तिरुमलेश और श्रीनिवास आदि नामों की व्युत्पत्ति भी कुछ इसी प्रकार की होती है।

मगर, सब नामों से एक और नाम अति विचित्र है, जो भार्या के नाम पर पुकारा जाना। 'श्री'निवास-यही नाम है। भगवान बालाजी स्वामी के वक्षःस्थल में जो दिव्य-नायिका बसी हुई है, ''व्यूहलक्ष्मी'' नाम से - कहा जाता है यह अपने भक्तजनों के मन की कामनाओं को जान कर ठीक समय पर अपने स्वामी को ज्ञात करा कर, उनकी फल-सिध्दि के वास्ते सिफारिश करती रहती है। अम्माँ वात्सल्य गुणोज्वला है और अपने भक्तों पर उन्हें अमित प्रेम और वात्सल्य होता है। उस दयामयी माता के अपने हृदयपटल पर बसने के कारण ही श्री वेंकटेश्वर का नाम 'श्री'निवास पड़ गया है।

श्रीनिवास का एक और नाम ''अडुगडुगुदंडालवाड़ा'' है। इसका अर्थ है - कदम-कदम पर प्रणामवाला। लोग तिरुमल आते समय सीढ़ियाँ व सोपान चढ़कर आते हैं। आर्त्तलोग अपने स्वामी को स्मरण में रख कर 'गोविंदा! गोविंदा!' कहते हुए पुकारते हैं। इससे सोपान चढ़ने का आयास भी मिट जाता है। श्री वेंकटेश भगवान का एक और नाम 'आपद्बांधव!' है।

इस प्रकार श्रीनिवास को तिरुमलगिरिवास, सप्तगिरीश, गोविंदा! आदि भी नाम हैं। ये सब भक्तों-द्वारा आर्ति में जीभर पुकारे हुए नाम हैं। भगवान बालाजी के अनगिनत नाम हैं। जिस नाम से भी पुकारो, स्वामी की करुणाकलित

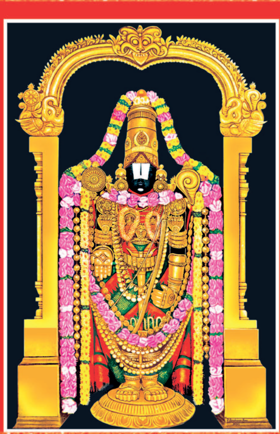

दृष्टि तुम पर गिरेगी तथा तुम्हारी झोली भरके वरदान मिल कर ही रहेंगे। तभी तो तिरुमलगिरि पर यह जनसमूह इकट्ठा हो रहा है, अपना-अपना वरदान बटोरने!!

८. अपूर्व आभरण

घन वेंकटेश्वर के पादादि मस्तक तक अनगिनत दिव्याभरण तथा मणि-मय हार अलंकृत हो कर, भक्तों को आश्चर्य से आनंद लहरी में डुबो देते हैं। श्रीस्वामी के ऐसे जगज्ञगीयमान् अलंकरण व आभूषण असंख्य मौजूद हैं!!

सोने का पद्मपीठ, सोने का पाद-कवच, स्वर्ण पीतांबर, सोने का नंदक खड्ग, वज्र-खचित सूर्यकठारी, वैकुंठहस्त (वरदहस्त), कटिहस्त, सोने के कवच, सालग्राम हार, शंख और चक्रों के सोने के कवच-जिन पर नवरत्न जड़े हैं, लक्ष्मीहार, चार पंक्तियों की सहस्र नामों की मालाएँ, वज्रकिरीट, मकर-तोरण... ऐसे असंख्य श्री वेंकटेश्वर स्वामी के आपादमस्तक के आभूषण हैं, जिनकी कीमत हम अंदाजा नहीं लगा सकते!!

संदर्भानुसार इन जेवरातों को स्वामी पर अलंकृत किया जाता है। ये सब जवाहिरात कहाँ से आये और किन्होंने दिये?- हाँ ये सब आभूषण भक्तों ने श्रीस्वामी को श्रद्धापूर्वक अर्पित किया था, अपनी मनोकामनाओं की सिद्धि या पूर्ति हो जाने पर! कितने लोगों को वरदान दिया, कितने भक्तों का पेट भरा होगा, किन-किन लोगों की इच्छा-पूर्ति की थी, किसे जिताया और किसे संपन्न बनाया होगा कि उन-उन विजेता भक्तों ने भगवान बालाजी को इस प्रकार के उपहार बहुमूल्य राशि में ला-लाकर उनके-चरणों-तले अर्पित किया, अर्पित कर रहे हैं और अर्पित करते ही रहेंगे!!

ये स्वर्ण अभूषण श्रीस्वामी की संपदा में कल-परसों नहीं आ मिले थे। ये तो हजारों सालों से तिरुमलेश भगवान की तालिका में इकट्ठे होते हुए आ रहे हैं। इस तरह सदियों से अपने भक्तों के समर्पित जेवरात को श्रीनिवास भगवान अलंकृत करते हुए भक्तों को हर्षाता आ रहा है।

९. स्वादिष्ट पकवान

आनंदनिलय भगवान अलंकार प्रिय है! इससे बढ़ कर आहार-प्रिय देव है! उससे भी भक्त-प्रिय है! भक्तों के लिए ही महा चाव-भरे-लड्डू, वडे, दोसै, अप्पम्, क्षीरान्न,

पायस, कदंभम्, मोलहोरा, पोंगली, सीरा, केसरी आदि अनगिनत महा स्वादिष्ट अन्न-प्रासादों को पेट-भर स्वीकारता है!

भोजन-प्रिय श्रीनिवास प्रभु हर दिन बिन माँजी थालियों में स्वाद लेता है। एक बार भोजन किये थाली को बिना माँजे फेंक देते हैं। पश्चात् भोजन के लिए फिर से नयी थाली का उपयोग करते हैं; विचित्र है न यह बात?! दर असल श्रीनिवासभूपति को भोजन किस पात्र में परोस कर समर्पित करते है?! - एक माटी के घड़े को फोड़ कर, उस घड़े के निचले विशाल टुकड़े में श्रीस्वामीजी को नैवेद्य का समर्पण किया जाता है। इसी घड़े के टुकड़े को आलयी परिभाषा में **'ओडु'** (घड़े का टुकड़ा) बोलते हैं। इसी पवित्र मृण्मय ओडु में भगवान के लिए अन्नप्रसाद समर्पण किया जाता है। एक बार उपयोगित ओडु (खपड़ा) को फेंक देते हैं। दुबारा एक नये के खपड़े में बालाजी को अन्नप्रसाद समर्पित करते हैं। इस प्रक्रिया में कोई लोहे की थाली उपयोगित नहीं की जाती। अतएव श्री वेंकटेश भगवान को ''तोमनि पल्लालवाडु'' (बिन माँजे थालियों वाला भगवान) कहते हैं।

इस तरह हर दिन 'ओडु' में ही अन्नप्रसाद का स्वाद लेने वाले अनंदनिलयवासी श्रीनिवास का वैभव क्या इतना महान है - ऐसा हमें आश्चर्य चकित होना ही पडेगा न! ऐसा जो कुछ भी श्रीस्वामी खाये, मगर उन्हें पुनः अपने भक्तों को ही प्रसादित करेगा न! उन्हें खाये भक्तों को तुष्टि के साथ-साथ पुष्टि की भी सिद्धि प्राप्त होकर, उनकी समस्त इच्छाओं की पूर्ति हो रही है! उन्हें संपूर्ण स्वास्थ्य के महाभाग्य की सिद्धि मिल रही है!! (क्रमशः)

तिरुमल में दर्शनीय क्षेत्र

स्वामि पुष्करिणी : मंदिर के निकट स्थित यह तालाब अतिपवित्र है। यात्री मंदिर में प्रवेश करने के पूर्व इसमें स्नान करते हैं। आत्मा व शरीर की शुद्धि के लिए यहाँ स्नान करना श्रेष्ठ है।

आकाश गंगा : मंदिर की उत्तरी दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

पापविनाशनम् : मंदिर की उत्तरी दिशा में ५ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

वैकुंठ तीर्थ : मंदिर की ईशान दिशा में लगभग ३ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

तुम्बुरु तीर्थ : मंदिर की उत्तरी दिशा में १६ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

भूगर्भ तोरण (शिलातोरण) : यह अपूर्व भूगर्भ शिलातोरण मंदिर की उत्तरी दिशा में १ कि.मी. दूरी पर स्थित है।

ति.ति.दे. बगीचे : देवस्थान के आध्वर्य में सुंदर व आकर्षक बगीचे लगे हुए हैं, जिनमें विशिष्ट पेड व पौधे मिलते हैं।

आस्थान मंडप (सदस हाल) : यहाँ धर्म प्रचार परिषद् के आध्वर्य में धार्मिक कार्यक्रम मनाया जाते हैं। जैसे भाषण, संगीत-गोष्ठी, हरिकथा-गान एवं भजन।

श्री वेंकटेश्वर ध्यान ज्ञान मंदिर (एस.वी. म्यूजियम्) : इस कलात्मक सुंदर भवन में एक म्यूजियम्, ध्यान केंद्र तथा छायाचित्र-प्रदर्शिनी आयोजित है।

ध्यान केंद्र : तिरुमल के एस.वी. म्यूजियम् एवं वैभवोत्सव मंडप में स्थित ध्यान केंद्रों में भगवान पर ध्यान केंद्रित कर भक्त शांति को प्राप्त कर सकते हैं।

''प्रभु प्राप्ति के लिये कलियुग में प्रेम की प्रधानता''

- श्री ज्योतीन्द्र के. अजवालिया

हर युग में प्रभु को पाने के लिये अलग अलग पद्धति थी। कोई युग में अनुष्ठान से, तो कोई युग में यज्ञादि कार्य से, तो को युग में केवल प्रभु नाम स्मरण से भगवान मिलते है। इस कलियुग में प्रभु को प्रकट करने के लिये केवल नाम स्मरण ही चाहिए। प्रधान बाबत यह है कि कलियुग में प्रभु को पाने के लिये, भगवान प्रकट करने के लिये, केवल प्रेम ही चाहिये, मात्र प्रेम से ही कलियुग में भगवान को प्राप्त किया जा सकता है।

हमारे शास्त्र में कई सारे दृष्टांत मौजूद है।

आज हम यहाँ भगवान और भक्त के दास कुलशेखरजी, उसके रामायण की कथा में, रावण द्वारा श्री सीताजी का हरण सुना। सुनते ही उसे आवेश आ गया और वह तुरन्त हाथ में तलवार लेकर घोडे पर सवार हो कर मारो-मारो चिल्लाता हुआ भागा और घोडे के साथ समुद्र में कूद पडा। ऐसे ही दूसरे एक प्रेमी श्री लीलानुकरणजी ने नृसिंह लीला में नृसिंह भगवान बनकर सचमुच हिरण्यकश्यप को मार डाला। तीसरा भक्त श्री रतिवन्तीजी, श्री रतिवन्तीबाई ने श्री भागवत की कथा में सुना कि माता यशोदा ने रस्सी से श्रीकृष्ण को बांध दिया। सुनते ही अपने प्राण त्याग दिये।

इन भक्ति चरित्रों से कलियुग में प्रेम की प्रधानता प्रकट एवं सिद्ध हुई। आये हम तीनों भक्तों के बारे में अनुसंधान करे।

श्री कुलशेखरजी

श्री कुलशेखरजी कोल्लिनगर (केरल) के राजा थे। ये भगवान को कौस्तुभमणि के अवतार माने जाते है। राजा होने पर भी उनकी विषयों में तनिक भी प्रीति नही थी। वे सदा भगवद्भाव में लीन रहने लगे। उनका सारा समय, कीर्तन, भजन, ध्यान और भगवान के अलौकिक चरित्रों के श्रवण में ही व्यतीत होता। उनके इष्टदेव श्रीराम थे और वे दास्यभाव से उनकी उपासना करते थे।

एक दिन वे बडे प्रेम के साथ श्री रामायण की कथा सुन रहे थे। प्रसंग यह था कि भगवान श्रीराम सीताजी की रक्षा के लिए लक्ष्मण को नियुक्त कर स्वयं अकेले खरदूषण की विपुल सेना से युद्ध करने के लिये उसके सामने जा रहे हैं। पण्डितजी कह रहे थे -

चतुर्दशसहस्राणि रक्षसां भीमकर्मणाम्।
एकश्च रामो धर्मात्मा कथं युद्धो भविष्यति।।

अर्थात् धर्मात्मा श्रीराम अकेले चौदह हजार राक्षसों से युद्ध करने जा रहे हैं, इस युद्ध का परिणाम क्या होगा?

कुलशेखरजी कथा सुनने में इतने तन्मय हो रहे थे कि उन्हें यह बात भूल गयी कि यहाँ रामायण की कथा हो रही है। उन्होंने समझा कि 'भगवान वास्तव में खर-दूषण की सेवा के साथ अकेले युद्ध करने जा रहे हैं। यह बात उन्हें कैसे सह्य होती, वे तुरंत कथा में से उठ खडे हुए। उन्होंने उसी समय शंख बजाकर अपनी सारी सेना एकत्र कर ली और सेनानायक को आज्ञा दी कि 'चलो, हम लोग श्रीराम की सहायता के लिये राक्षसों से युद्ध करने चले।' ज्यों ही वे वहाँ से जाने के लिये तैयार हुए, उन्होंने पण्डितजी के मुँह से सुना कि 'श्रीराम ने अकेले ही खर-दूषण सहित सारी राक्षस सेना का संहार कर दिया। तब कुलशेखर को शान्ति मिली और उन्होंने सेना को लौट जाने का आदेश दिया।

श्री कुलशेखरजी कई वर्षों तक श्रीरंगक्षेत्र में रहे। उन्होंने वहाँ रहकर 'मुकुन्दमाला' नामक संस्कृत का एक बहुत सुन्दर स्तोत्र-ग्रन्थ रचा। इसके बाद ये तिरुपति में रहने लगे और वहाँ रहकर इन्होंने बडे सुन्दर भक्तिरस से भरे हुए पदों की रचना की। इन्होंने मथुरा, बृन्दावन, अयोध्या आदि कई उसके तीर्थों की भी यात्रा की थी और श्रीकृष्ण तथा श्रीराम की लीलाओं पर भी अनेक पद रचे।

श्रीलीलानुकरणजी

एक बार जगन्नाथधाम में नृसिंहलीला हुई, उसमें लीलानुकरण भक्त ने नृसिंह का वेष धारण कर लीला का अनुकरण किया और आवेश में आकर उन्होंने हिरण्यकश्यप को सचमुच ही मार डाला। कुछ लोग कहने लगे कि इसने आवेश में आकर मारा है। अन्त में परीक्षा करने के लिये लोगों ने कहा कि इन्हें रामलीला में दशरथ बनाओ, तब पता लग जायगा। रामलीला की तैयार हुई। इन्हे दशरथ बनाया गया। श्रीरामजी के वन चले जाने पर उनके वियोग में व्याकुल होकर विलाप करते-करते इन्होंने अपना शरीर त्याग कर भाव को पूरा कर दिया तब लोगों ने पता चला की श्री लीलानुकरणजी सचमुच प्रेमवश भगवान में लीन हो गये।

श्रीरतिवन्तीजी

श्रीरतिवन्ती नाम की एक भाई थी। वह बडी भक्ता थी। उसने बालकृष्ण के स्वरूप में अपनी बुद्धि लगा दी। नित्यप्रति वात्सल्यभाव से उपासना करती और कथा श्रवण करती थी। किसी कारणवश एक दिन वह कथा में नही गयी। अपने पुत्र को कथा सुनने के लिये भेज दिया। कथा सुनकर आने पर पुत्र से पूछा कि आज कौन-सी कथा हुई? पुत्र ने कहा आज तो माता यशोदा ने बालकृष्ण को कमर में रस्सी बाँधकर उसे ऊखल से बाँध दिया, यह कथा हुई है। नवनीत से भी कोमल कलेवर में कढी रस्सी अति कष्टदायक हुई होगी, अतः बन्धन प्रसंग सुनते ही बाईजी की और ही दशा हो गयी। बालकृष्ण के कष्टा अनुभव करके उन्होंने अपनी प्रीति को सच्ची करके दिखा दिया और अपने शरीर को मानो न्यौछावर कर दिया।

इस तरह शास्त्रों में कई भक्तों की प्रभु के प्रति प्रेमलीला के बारे में वर्णन मिलता है, जैसे की मीरा, अर्जुन, शबरी, तुलसीदासजी, संत सूरदासजी आदि। यहाँ श्रीकुलशेखरजी, श्रीलीलानुकरणजी और श्रीरतिवन्तीजी के पावन चरित्र अनुसंधान से भी पता चला की प्रभु को पाने के लिये हमारे दिल में प्रभु के प्रति पूरा प्रेम होगा चाहिये, जितना प्रेम अगाध इतना प्रभु हमारी पास में रहता है, इस बात में लेश मात्र भी शंका नही है।

सुबह को लेकर रात तक की हर प्रवृति प्रभु के प्रति होनी चाहिये। हमारा उठना, बैठना, सोना, खाना, पीना सब प्रवृत्ति हमारे प्रभु के लिये ही होनी चाहिये। प्रभु पर हम ऐसा प्रेम न्यौछावर कर दे की प्रभु हमें उसकी शरण में लेने के लिये मजबूर हो जाय।

जय श्रीकृष्ण

भजेहं - ज्येष्ठराजं

- श्री वेमुनूरि राजमौलि

कोई भी शुभ कार्य क्यों न हो, संपन्न करने से पहले विघ्नेश्वर की आराधना अवश्य करनी चाहिए। संकल्पित कार्य निर्विघ्न संपन्न होने, हम गणपति की पूजा करते हैं।

ओम् गणानाम् त्वा गणपतिगूम् हवामहे
कविं कवीना मुपमश्रवस्तवम्।
ज्येष्ठ राजं ब्रह्मणां, ब्रह्मणस्पत
आनःश्रृण्वन्नूतिभि स्सीदसादनम्।।

गणपति के बारे में वेद का बताया हुआ मंत्र यह है। यह मंत्र गणपति का वर्णन तीन प्रकारों से करता है। लौकिक रूप; तात्त्विक स्वरूप तथा आत्मचिन्तन के बारे में बताता है यह वेद-मंत्र। ''गणों में गणपति के रूप में, कवियों में कवि के रूप में रहने वाले; अन्न-समृध्दिवाले, सबसे पहले प्रकटित होनेवाले, वेद-मंत्रों में प्रकाशित होनेवाले हे गणपति!... हमारी प्रार्थना सुनकर समस्त शक्तियों सहित हमारे सदन में आइए'', ऐसा पुकारना इस मंत्र का अर्थ है।

यदि तात्त्विक अर्थ ग्रहण करें तो, गणों का अर्थ समूह है। अनन्त विश्व एक महा गण है। इस सारे गणों में प्रकटित होनेवाली शक्ति गणपति हैं। चाहे कितने ही गण क्यों न हो गणपति तो एक ही हैं। यदि गणपति का तत्त्व जान लें तो... भिन्न दृष्टि हटकर एकत्व का अर्थ अवगत होता है। कर्म केलिए आवश्यक चैतन्य तथा संसार केलिए आवश्यक ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले गणपति हैं; ऐसा वर्णन किया गया है।

तीसरे अर्थ का परिशीलन करने पर ज्ञात होता है कि गणों का अर्थ इंद्रिय भी है; सारे इंद्रियों को मिलाये तो एक गण बनता है। हमारे इंद्रियों पर शासन चलाने वाली आत्मा... गणपति हैं। कवियों का अर्थ विचार है। इन विचारों का मूल आत्म-चैतन्य है। शरीर के पोषण के लिए अन्न चाहिए; उस से ही इंद्रियों को शक्ति मिलती है। हमारे कर्मों के लिए उनका अनुग्रह चाहिए। आमतौर पर देखें तो मालूम होता है कि हमारे शरीर रूपी सदन में आत्म-स्वरूप के रूप में गणपति प्रकाशित होते रहें तो ही हमारा जीवन साध्य बनता है; ऐसा तात्विकों ने वर्णन किया।

पुराणों ने गहराई से विघ्नेश्वर के रूप का आविष्करण किया। आदि में परमात्मा निराकारी हैं। इसलिए... हल्दी के लोंदे से गणपति का रूप तैयार करके पूजा-अर्चना किया करते हैं। आवश्यकता के अनुसार अपने तत्त्व का बोध-कराने वाले रूप का धारण करते हैं भगवान। वैसा धारण किया हुआ रूप ही विघ्नेश्वर-रूप है। उनका गज-वक्त्र-रूप बल व पुष्टि का संकेत है। वक्र-तुंड का अर्थ टेडे तुंड वाले हैं। वक्रों का खंडन करने वाले; ऐसा एक और अर्थ है। टेढे-मेडे विचारों को दूर करनेवाली शक्ति वे हैं। कार्य में उत्पन्न होने वाले विघ्नों का परिहरण करके... उसे ठीक रास्ते पर चलाने वाले गणपति हैं। सत्कार्यों में उत्पन्न होने वाले विघ्नों को दूर करने में ही नहीं... दुष्कर्मों में विघ्न पैदा करनेवाले विघ्नेश्वर ही हैं। विनायक-चतुर्थी के दिन गणपति की आराधना करके... हमारे विचार सव्य दिशा में अग्रसर होने की कामना करें। हमारे सत्कर्मों में उत्पन्न होने वाले विघ्नों का निवारण करने की प्रार्थना उनसे करें।

।। इति श्री ।।

साभार - आंध्र ज्योति (दैनिक)

(गतांक से)

श्री प्रतिवादि भयंकरं अण्णन्स्वामीजी का जीवन चरित्र

- श्रीकांची प्रतिवादि भयंकर श्रीनिवासाचार्य

दूसरे दिन अण्णा स्वामी अपने कुटुम्ब परिवार सहित जीयर स्वामी से, पञ्चसंस्कार से संस्कृत किये गये। तब से अण्णा स्वामी जीयर स्वामी को भगवान जैसा मानकर अनन्यचित्त होकर उनके साथ श्रीरंगम् में रहने लगे। जिस जिस ज्ञान को प्राप्त करना चाहिये प्राप्तकर, जैसा श्रीवत्सांकमिश्र (कूरेश स्वामी) भगवद्रामानुजाचार्य के सहायक रहें, जीयर स्वामी के सभी क्रियाकलापों में सहायक रहे। बडे लोगों का ऐसा अनुभव हुआ कि भगवद्रामानुजाचार्य श्रीमद्वरवरमुनीद्र हुए और कूरेश स्वामी हस्त्यद्रिनाथाचार्य हुए। (भगवद्रामानुजाचार्य का पुनरवतार श्री वरवरमुनीन्द्रजी और कूरेश स्वामीजी का पुनरवतार हस्यद्रिनाथाचार्य)

पेरिय जीयर स्वामी तिरुमल के भगवान श्री वेंकटेश के दर्शन करने की इच्छा से अण्णा स्वामीजी और अन्य शिष्यों के साथ प्रस्थान किये। रास्ते में श्री वरदराज भगवान, श्रीकांची, घटिकाचलक्षेत्र (षोलिंगर) के अक्कारक्कनि भक्तवत्सल (श्रीनृसिंह भगवान) तिरुचानूर में लक्ष्मी अलर्मेल्मंगै (श्री पद्मावती देवी), तिरुपति में श्री गोविन्दराज भगवान का दर्शन कर अन्त में तिरुमल को प्राप्त किये। वहाँ पेरिय जीयर स्वामी (बडे जीयर) से स्वागत किये गये और भगवान का दर्शन कर आनन्दित हुए।

दूसरे दिन प्रातःकाल पेरिय जीयर स्वामी विश्वरूप दर्शनार्थ मन्दिर गये। उस समय अध्यापक लोग तिरुप्पल्लियेलूच्चि (श्री भक्तांघ्रिरेणु सूरि के रचित तमिल भाषा के सुप्रभात प्रबन्ध) का पाठ कर रहे थे। पेरिय जीयर स्वामी संस्कृत भाषा के सुप्रभात व मंगलाशासन स्त्रोत्र के अभाव का अनुभव किया और अण्णा स्वामी को आज्ञा दिये कि संस्कृत में स्तोत्र रचना करो। अण्णा स्वामीजी ने सुप्रभात, स्तोत्र, प्रपत्ति व मंगलाशासन, श्री वेंकटेश भगवान के विषय में, जो श्रोत्रानन्द जनक और वेदवेदान्तार्थगर्भित रचना किये थे। पेरिय जीयर स्वामी और वहां के बडे जीयर स्वामी अन्य आचार्यपुरुष और सत्पुरुष लोग प्रशंसा किये थे स्तोत्र अमृत से अधिक स्वादिष्ट है। पेरिय जीयर स्वामी आज्ञा किये कि प्रतिदिन उत्थापन के समय में इन स्तोत्रों का पाठ करना चाहिये। इस आज्ञा के अनुसार इस मंदिर में प्रातःकाल में पाठ किये जाते हैं। भगवान भक्तों के हृदय में रहना बहुत पसन्द करते हैं। इससे अधिक निस्स्वार्थ वरवरमुनीन्द्र के हृदय में रहना। मंगलाशासन स्तोत्र के इस श्लोक से यह भाव स्फुटित होता है।

श्रीमत्सुन्दरजामातृमुनिमानसवासिने।
सर्वलोकनिवासाय श्रीनिवासाय मंगलम्।।

श्रीनिवासजी का मंगल हो जो जगत सब में व्याप्त हैं खास कर श्री वरवरमुनीन्द्रजी के हृदय में। पेरिय जीयर स्वामीजी भगवत्चरणारविन्दों को प्राप्त कराने वाले हैं।

सौम्योपयन्तृमुमिना मम दर्शितौ ते
श्रीवेंकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये।।

श्री वेंकटेशजी के चरणों में शरण होता हूँ जो श्री वरवरमुनीन्द्रजी से संदर्शित है (प्रदर्शित)।

मणवालमामुनि या वरवरमुनि का संस्कृत अनुवाद ये सुन्दरजामातृमृनि, सौम्योपयन्तृमिनि ये दोनों नाम है।

यहाँ स्मरण करने का योग्य है कि श्री वरवरमुनि की प्रशंसा में श्री अण्णा स्वामी ने चेय्य तामरैत्तालिणै वालिये आदि वालितिरुनामं (मंगलाशासन) को रचा है जो हर श्रीवैष्णव मन्दिरों व घरों में, पूजा के अन्त में पाठ किये जाते हैं। इस से यह सिद्ध किया जाता है कि वरवरमुनि स्वामी के प्रति कितनी गाढ (गहरी) भक्ति है श्री अण्णा स्वामीजी को। पोय्यिलाद मणवालमामुनि पुन्दिवालि पुगल वालि वालिये मणवालमामुनिये इन्नुमोरु नूत्ताण्डिरुम (वरवरमुनि की विद्वत्ता (बुद्धि) जीते रहें जिस में दोष नहीं है। (खास कर झूठ) आपके सभी वैभव सौ से अधिक साल जीते रहें)।

कुछ दिन तिरुमल वास करने के बाद, वेंकटेश भगवान की आज्ञा लेकर, वरवरमुनीन्द्रजी श्रीरंगम् वापस पधारे। उन्होंने अण्णा स्वामी को आज्ञा दी कि १०८ दिव्यदेशों के भगवान के विषय में सुप्रभात आदि स्तोत्र रचना। इस आज्ञा से अण्णा स्वामी बहुत सन्तुष्ट हुए। अण्णा स्वामी भगवद्रामानुजाचार्य एवं वरवरमुनीन्द्रजी की प्रशंसा में भी ऐसे स्तोत्रों का रचा।

एक सुदिन में, श्री वरवरमुनीन्द्र ने, अण्णा स्वामी को श्रीभाष्य परम्परा के अध्यक्ष बनाकर उनको श्री भाष्यसिंहासनाधिपति पद में अभिषिक्त किया। सभी शिष्यों को श्री भाष्यग्रन्थ के अध्ययन कराने का आदेश दिये।

शिष्यों के लाभ के लिये (उन्नति के लिये) परम्परा के अनुसार, शिष्यों का यह कर्तव्य होता है कि तनियन बोलकर गौरवान्वित करना (कृतज्ञता का अनुसन्धान)। पेरिय जीयर स्वामी ने इस तनियन का आरम्भ किया।

वेदान्तदेशिककटाक्षविवृद्ध बोधं

अण्णा स्वामीजी जीयर स्वामीजी के प्रति अपने भक्तिभाव का भी प्रकाश होना चाहिये इस उत्कट इच्छा से कान्तोपयन्तृयमिन : करुणैकपात्रं इस भाग को स्वयं पढा वहां एकत्रित शिष्यलोग -

वत्सान्ववायमनवद्यगुणैरुपैतं
भक्त्या भजामि परवादि भयंकरार्यम् - ऐसा इस को पूर्ण किये।

जो लोग श्रीभाष्य का अध्ययन करेंगे उनको इस तनियन का अनुसन्धान (बोलना) अत्यन्त आवश्यक है।

अण्णा स्वामी और वरवरमुनीन्द्रजी श्रद्धाभक्तिपूर्वक दर्शन की सेवा करते श्रीरंगम् में विराजते थे। ऐसे समय में एक अद्वैत विद्वान तिरुमल में आकर वहाँ के श्रीवैष्णवों से आग्रह किया कि शास्त्रार्थ कर अपने अपने सिद्धान्त की रक्षा करें।

वहाँ विद्वान लोग आपस में परामर्श कर निर्णय किये कि श्री वरवरमुनीन्द्रजी की सहायता मांगे और श्रीनिवास भगवान की आज्ञा पाकर तुरंत श्रीरंगम् को समाचार भेजे। समाचार को प्राप्त कर रंगनाथ की आज्ञा प्राप्त करने के लिये वरवरमुनीन्द्रजी मन्दिर गये। भगवान ने इशारा किया कि अण्णा स्वामी को इस कार्य के लिये भेजें और जीयर स्वामी श्रीरंगम् में ही रहें। अण्णा स्वामीजी जीत जायेंगे ऐसा वरदान दिया। इस मार्गदर्शन से पेरिय जीयर स्वामीजी अण्णा स्वामीजी को, श्रीवैष्णव समूह के साथ, रुक्मिणी, सत्यभामा सहित श्रीवेणुगोपाल भगवान को, आराधनार्थ देकर, आशीर्वाद देकर भेजे कि शास्त्रार्थ में जीतो।

अण्णा स्वामी तिरुमल में वहाँ के मित्रों के अगवानी के बाद भगवान का दर्शन कर शास्त्रार्थ करना शुरू किये। तीन दिन विवाद चला किसी पक्ष को विजय प्राप्त करने का मार्ग दिखाया नहीं। तीसरे दिन की रात में अपने भगवान का आराधन कर अपने दर्शन की रक्षा करने की प्रार्थना करते हुए सो गये। उन के स्वप्न में भगवान कुछ तर्क व युक्तियों को बताया जिस तर्क व युक्ति से प्रतिपक्षी परास्त हो जावे।

अण्णा स्वामीजी शास्त्रार्थ सभा में पहुँचे और वेणुगोपाल भगवान से बताये गये तर्क और युक्तियों से प्रतिपक्षी को परास्त कर दिये। श्रीरामानुजाचार्य की जय हो ऐसा जयघोष घूम उठा। प्रतिपक्षी अपने पराजय को मान लिया और अण्णा स्वामी को साष्टांग प्रणाम किया। अण्णा स्वामीजी मन्दिर में गये। भगवान वेंकटेश को अपनी कृतज्ञता प्रगट किये। अण्णा स्वामीजी के वियज से वेंकटेश भगवान प्रसन्न हुए और उनको पालकी, छडी, चंवर, सिंहासन आदि देकर बधाई किये। भगवान की आज्ञा लेकर, श्री वरवरमुनीन्द्रजी को शास्त्रार्थ की सारी वृत्तान्त को बताने के लिये श्रीरंगम् लौटे। अण्णा स्वामीजी के मुख्य शिष्यलोग उनके प्रति प्रशंसा गान गाये।

मायिमंतगजमस्तककोटीपाटनपाटलपाणितलो यः।
श्रुत्यटवीकुहरेषु समिन्धे स प्रतिवादिभयंकरसिंहः।।

अकविं कवियन् अपटुं पटुयन् अबुधं बुधयन् अगुरुं गुरुयन्।
परवादिभयंकरपादरजः परमाणुपराक्रम उल्लसति।।

अण्णा स्वामीजी अपने ज्येष्ठ पुत्र भगवत्कैंकर्य करने तिरुमल में छोडे। वापस रास्ते में श्री कांची में एक दो दिनकर अपने द्वितीय पुत्र को, भगवत्कैंकर्य करने कांची में छोडकर श्रीरंगम् पहुँचे। श्री वरवरमुनीन्द्र को तिरुमल के सारे वृत्तान्तों को कह सुनाये। स्वामीजी अपने से नियत अष्ट दिग्गजाचार्यों में अण्णा स्वामी को भी अभिषिक्त कराये। अण्णा स्वामीजी तिरुमल में रहने की वेंकटेश भगवान की आज्ञा का पालन चाहे। श्री अण्णा स्वामीजी के पूर्वोक्त वचन को सुनकर प्रेम में विह्वल होकर गद्गदकण्ठ से श्री वरवरमुनीन्द्र स्वामीजी ने कहा की यद्यपि में सुत, वित, नारी के वियोग को सहन करता हूँ। परन्तु आपके दीर्घकाल तक वियोग सहने में समर्थ नहीं हूँ। आपके प्रतिनिधि के रूप में ज्येष्ठ पुत्र हैं अतः श्रीरंगम् में रह सकते यह भगवदाज्ञा का उल्लंघन नहीं होगा। गुरोराज्ञा गरियसी इस वाक्य के अनुसार श्रीरंगम् में निवास करने लगे।

श्री अण्णा स्वामीजी श्रीरंगम् में श्री वरवरमुनीन्द्र स्वामीजी की सन्निधि में निवास करते हुये सेवा का आनन्द ले रहे थे। श्री शेषावतार भगवान रामानुजाचार्य के अपरावतार श्री वरवरमुनीन्द्र स्वामीजी ने अण्णा स्वामीजी सहित सभी शिष्यों को बुलाकर कहा कि अब मेरा मन भगवान श्रीवैकुंठनाथ की सेवा करने के लिए प्रेरित हो रहा है आप सभी मिलकर श्रीयतिराज प्रणीत श्रीभाष्य का प्रचार करते हुये सर्वदेश दिशाओं में श्रीवैष्णवता का प्रचार करना। इस प्रकार हितोपदेश देकर कुम्भ मास के कृष्णपक्ष द्वादशी तिथि को अपने आचार्य श्रीशैलेश स्वामीजी के श्रीचरणों का ध्यान करते हुये सुषुम्ना नाड़ी के द्वारा सदा के लिए इस पांचभौतिक शरीर का परित्याग कर ब्रह्मरन्ध्रभेदन करके अर्चिरादिमार्ग के द्वारा आगमनरहित दिव्यधाम श्रीवैकुंठ को चले गये।

श्री वरवरमुनीन्द्र स्वामीजी के असह्य वियोग से संतप्त श्री अण्णा स्वामीजी ने आचार्य के वियोगजनित शोक को भूलने के लिये अपने तृतीय कनिष्ठ पुत्र अभिरामवराचार्य और अनेक श्रीवैष्णवों के साथ दिव्यदेश यात्रा को प्रस्थान किए। दिव्यदेशों में भ्रमण करते हुये मेल्कोटा पहुँचे। श्रीसंपत्कुमार भगवान, तिरुनारायण भगवान और श्रीरामानुज स्वामीजी का मंगलाशासन किया। वहाँ कुछ दिनों तक रहते हुये उभयवेदान्त के गूढ तत्त्वों का उपदेश किये जिससे वहाँ के श्रीवैष्णव आनंदविभोर हो गये। कुछ दिनों बाद संपत्कुमार भगवान कि आज्ञा पाकर अपने तृतीय पुत्र अभिरामवराचार्य को मेल्कोटा में निवास करने की आज्ञा देते हुये श्रीकांची के लिये प्रस्थान किये। श्रीकांची आकर अपने पुत्र श्री अनंताचार्यजी से कहा कि उभयवेदान्त की रक्षा करते हुये आपलोग आपस में प्रेम और सौहार्द के साथ श्री वरदराज भगवान का कैंकर्य करते रहो। श्रीकांची में श्री वरदराज भगवान से आज्ञा लेकर श्रीवैष्णवों के साथ श्रीरंगम् के लिये प्रस्थान किया। श्रीरंगम् में निवास करते हुये संप्रदाय के गूढार्थों का उपदेश शिष्यों को दिया।

श्री अण्णा स्वामीजी एक दिन विचार विमर्श किया कि श्री वेंकटेश भगवान ने आदेश दिया था कि - श्रीशेषाद्रि पर तुम सर्वदा निवास करो यह प्रभु के आदेश का पालन करना मात्र ही केवल मेरे जीवन में शेष रह गया। अब उसके लिये सुन्दर समय उपस्थित है। इस प्रकार विचार कर श्रीरंगनाथ भगवान से आज्ञा लेकर तिरुमल के लिये प्रस्थान किया। तिरुमल में श्रीपुष्पमंटप में विराजमान होकर प्रतिदिन आकाशगंगा से एक घडा जल लाकर इलायची लवंग तथा कर्पूरादि के द्वारा सुगंधित कर अभिषेक के लिये समर्पित कर श्रीनिवास भगवान की सेवा करने लगे। बहुत से आन्ध्रदेशीय ब्राह्मण श्री अण्णा स्वामीजी के चरणाश्रित होकर अपने जीवन को कृतार्थ किये। तिरुमल में निवास कर शिष्यों को श्रीभाष्यार्थ, सहस्रगीति का छत्तीस हजार व्याख्यान का उपदेश दिया। श्री अण्णा स्वामीजी सदैव द्वयोच्चारण करने से तिरुमल में मंत्ररत्नप्रतिवादिभयंकर एसी ख्याति हो गयी।

श्री अण्णा स्वामीजी अपने सभी कर्तव्य और समस्त कार्यों को समाप्तकर एक दिन शिष्यसमुदाय को बुलाकर कहा कि - अब मेरा मन श्रीवैकुंठनाथ के चरण कमलों का नित्यकैंकर्य करने के लिये आत्मा को सदैव प्रेरित कर रहा है। इससे मैं अपना अंतिम उपदेश सुनाता हूँ कि - श्रीयतीन्द्र और

श्रीयतीन्द्रप्रवण के चरम उपदेश की रक्षा करते हुये सर्वत्र श्रीवैष्णवता का प्रचार करना। इस प्रकार सदुपदेश देकर मीन मास शुक्ल पक्ष नवमी को श्री अण्णा स्वामीजी ने अपने आचार्यदेव श्री वरवरमुनीन्द्रजी के श्रीचरणों का ध्यान करते हुये दिव्यसूरियों के द्वारा सुसेवित श्रीवैकुंठ को प्राप्त किया। श्री अण्णा स्वामीजी के श्रीवैकुंठ गमन से चारों तरफ हाहाकार मच गया। भगवान श्री वेंकटेश भी ऐसे विकल हुये जैसे श्रीलक्ष्मण के अंतिम विरह से भगवान श्रीराम। फिर विवेकी लोगों के आश्वासन से शिष्य लोग आचार्य के चरम कैंकर्य करने में तत्पर हुये। श्री अण्णा स्वामीजी के ज्येष्ठ पुत्र श्रीनिवासाचार्य स्वामीजी ने आचार्य के लीलाविभूति परित्याग के दिन नक्षत्र आदि का निर्देश करते हुये अनुसंधान करते हुये उनका चरम श्लोक बनाया और स्वयं स्नान करके ऊर्ध्वपुंड्र धारण कर रजत के कलशों में आकाशगंगा से तीर्थ लाये और उस तीर्थ से श्रीसूक्त आदि पंच सूक्तों और द्वयमंत्र का अनुसन्धान करते हुये श्री अण्णा स्वामीजी के अंतिम श्रीविग्रह को स्नान कराकर नव वस्त्र धारण कराया। द्वादश ऊर्ध्वपुंड्र तिलक धारण कराकर सुन्दर पंचमाला आदि से श्रृंगार किया। श्री वेंकटेश मंदिर से वस्त्र और पुष्पमाला आचार्य के सन्मान हेतु छडी, छत्र, चामर और अनेक प्रकार के वाद्यों के साथ लाये। सुन्दर श्रृंगार से अलंकृत विमान पर श्री अण्णा स्वामीजी के श्रीविग्रह को विराजमान कराकर स्तोत्र और प्रबंधपाठ करते हुये श्रीवेंकटगिरि के सभी वीथियों में घुमाते हुये अंतिम यात्रा जहाँ आचार्यों का ब्रह्ममेध संस्कार हुआ था उसी स्थान पर श्री अण्णा स्वामीजी का ब्रह्ममेध संस्कार सम्पन्न हुआ। सभी शिष्यों ने क्षौर आदि कर्म कराये।

श्री अण्णा स्वामीजी का श्रीवैकुंठोत्सव अनेक दिव्यदेशों में बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हुआ।

चरम श्लोक

अब्दे श्रीमुखनामके दिनमणौ मीनं गते पाण्डरे
पक्षे पुष्यभसंयुते वसुतिथौ तारेयवारान्विते।
श्रीमान् वत्सकुलाम्बुधीन्दुरनघः स्वाचार्यदत्तात्मधीः
श्रीवैकुण्ठमगादकुण्ठविभवो वादीन्द्रभीकृद्गुरुः।।

श्री प्रतिवादि भयंकरं अण्णा स्वामीजी तनियन एवं मंगलाशासन

अवतार तनियन

यद्वादिभीकरगुरोरवतारहेतुराषाढमासि जगदेकगुरोरिहासीत्।
पुष्यं ततस्तदगमद्गुरुपुष्यसंज्ञां नूनं तदेव गुरुवासरसंगमेन।।
आषाढे पुष्यभे जातं वादिभीकरमाश्रये।
वेदान्ताचार्यसच्छिष्यं वरयोगिपदाश्रितम्।।

तनियन

वेदान्तदेशिककटाक्षविवृद्धबोधं कान्तोपयन्तृयमिनः करुणैकपात्रम्।
वत्सान्ववायमनवद्यगुणैरुपेतं भक्त्या भजामि परवादिभयंकरार्यम्।।

प्रशंसापद्य

मायिमतंगजमस्तककोटीपाटनपाटलपाणितलो यः।
श्रुत्यटवीकुहरेषु समिन्धे स प्रतिवादिभयंकरसिंहः।।
अकविं कवियन् अपटुं पटुयन् अबुधं बुधयन् अगुरुं गुरुयन्।
परवादिभयंकरपादरजः परमाणुपराक्रम उल्लसति।।

वाळितिरुनामं

मन्नुपुहऴ् मणवाळ मुन्निक्कन्बन् वाळिये,
मारन् शठकोपन् मोळि वळुवादान् वाळिये,
अन्नैयिलुमडैन्दवर् पाल् अरुलुडैयोन् वाळिये,
एन्नैयुंतन् इन्नरूळालेडुत्तळित्तान् वाळिये,
इरण्डुलकुं तन्पुहळैएत्तुमवन् वाळिये,
पन्नुकलै याळ्वार् हळ् पदमुडैयोन्वाळिये,
परवादिभयंकरमण्णन् पडियिलेन्नुं वाळिये,
मालैपुनै तोळान् मणवाळमामुनिवन्
कोलं मरवाद कोण्डले पालमुदम्,
एन्नुम् परवादिभयंकरमण्णने इन्नुमोरुनूत्ताण्डिरूम्।
श्री प्रतिवादि भयंकर अण्णा स्वामीजी का मंगल हो...!

(समाप्त)

सितम्बर महीने का राशिफल

- डॉ.केशव मिश्र

मेषराशि - झगड़े विवाद का योग है इसलिए वाद-विवाद स्थिति से बचना चाहिए। यात्रा में कष्ट और परेशानी आ सकती है। मास के मध्य में अधिक कार्य बन सकता है। परिवार में कोई शुभ कार्य सम्पादन होंगे।

वृषभराशि - चलते कार्यों में रुकावट बनेगी, वैवाहिक जीवन में घरेलू समस्याओं को लेकर सामान्य परेशानी हो सकती है। वाहन क्रय-विक्रय में हानि के योग हैं। मासान्त कुछ अच्छा व्यतीत होगा।

मिथुनराशि - नवीन सम्पत्ति खरीदने के लिये स्थिति अच्छी रहेगी। मासारम्भ में आपका व्यापार कुछ गति पकड़ पायेगा, काम में मन लगेगा। स्वास्थ्य की स्थिति कमजोड़ रहने की संभावना बनी रहेगी।

कर्कराशि - मासारम्भ में आपका व्यापार कुछ गति पकड़ पायेगा, काम में मन लगेगा। स्वास्थ्य की स्थिति कमजोड़ रहने की संभावना बनी रहेगी, किन्तु मनोबल बढ़ेगा। शीघ्र स्वास्थ्य लाभ भी हो जाएगा।

सिंहराशि - भौतिक सुख-सुविधा के योग हैं। भूमि लाभ, मित्रों का सहयोग, मनोरंजन के साधन बनेंगे। किया गया परिश्रम सफल होगा, कुछ आलस्य बना रहेगा। मासान्त में मन असन्तुष्ट रहेगा।

कन्याराशि - समय हल्का है, किसी भी व्यक्ती के ऊपर पूर्ण विश्वास न करें धोखाधड़ी हो सकती है। आकस्मिक बीमारी आ सकती है। स्वार्थी स्वभाव वालों से बचकर रहें।

तुलाराशि - घर-गृहस्थी में तनाव की स्थिति उत्पन्न रहेगी, पारिवारिक जन से मिथ्या सन्देह के घेरे में आ सकते हैं। अपनी बात को स्पष्ट रूप से कहने का ही प्रयास रखें।

वृश्चिकराशि - कारोबार में उतार-चढ़ाव की स्थिति बनी रहेगी। सेहत सामान्य से कुछ कम ही रहेगी। नजदीकी जनों से सम्बन्धों में कड़वाहट आ सकती है। सन्तान पक्ष कमजोर रहेगा।

धनुराशि - समय ठीक नहीं है। भाइयों में मतभेद होने की संभावनाएँ हो सकती है। नजदीकी के दूर होने के योग हैं। सन्तान पक्ष कमजोर रहेगा।

मकरराशि - पूर्व की स्थिति में सुधार होगा। धनार्जन की स्थिति में भी परिवर्तन होगा। घर-परिवार में माहौल सामान्य रहेगा। किसी अपनों का सहयोग प्राप्त होगा। पूर्व में किये गये परिश्रम का फल मिलेगा।

कुम्भराशि - महीने के आरंभ में अधिक संघर्ष करना पड़ेगा। घरेलू जीवन मन्दा चलेगा। विद्यार्थी तनावग्रस्त रहेंगे, खर्च बढेगा। यात्रा का लाभ नहीं मिलेगा। कारोबारी क्षेत्रों में मन्द स्थिति बना रहेगा।

मीनराशि - आर्थिक स्थिति में उतार-चढाव के योग हैं। विद्यार्थियों के लिए समय उत्तम रहेगा, मास के मध्य में सभी सुधार आने के योग हैं। मासान्त सुखद रहेगा।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

सप्तगिरि

(आध्यात्मिक मासिक पत्रिका)

चंदा भरने का पत्र

१. नाम : ....
(अलग-अलग अक्षरों में स्पष्ट लिखें) ....
....
पिनकोड ....
मोबाइल नं ....

२. वांछित भाषा : ☐ हिन्दी ☐ तमिल ☐ कन्नडा ☐ तेलुगु ☐ अंग्रेजी ☐ संस्कृत

३. वार्षिक / जीवन चंदा :

४. चंदा का पुनरुद्धरण :

(अ) चंदा की संख्या :

(आ) भाषा :

५. पेय रकम :

६. पेय रकम का विवरण :

नकद (एम.आर.टि. नं) दिनांक :

धनादेश (कूपन नं) : दिनांक :

मांगड्राफ्ट संख्या : दिनांक :

प्रांत :

दिनांकः चंदा भरनेवाला का हस्ताक्षर

....

- वार्षिक चंदा : रु.६०.००, जीवन चंदा : रु.५००-००
- नूतन चंदादार या चंदा का पुनरुद्धार करनेवाले इस पत्र का उपयोग करें।
- इस कूपन को काटकर, पूरे विवरण के साथ इस पते पर भेजें–
- संस्कृत में जीवन चंदा नही है, वार्षिक चंदा रु.६०-०० मात्र है।

प्रधान संपादक, सप्तगिरि कार्यालय, के.टी.रोड,
तिरुपति-५१७ ५०७. (आं.प्र)

नूतन फोन नंबरों की सूचना

चंदादारों और एजेंटों को सूचित किया जाता है कि हमारे कार्यालय का दूरभाष नंबर बदल चुका है और आप नीचे दिये गये नंबरों से संपर्क करें–

कॉल सेंटर नंबर
0877 - 2233333

चंदा भरने की पूछताछ
0877 - 2277777

अर्जित सेवाएँ और आवास के अग्रिम आरक्षण के लिए कृपया इस नंबर से संपर्क करें–

STD Code:
0877

दूरभाष :

कॉल सेंटर नंबर :
2233333, 2277777.

Edited and Published on behalf of T.T.Devasthanams by **Dr.K.Radha Ramana, M.A., M.Phil, Ph.D.,** Chief Editor, T.T.D. and Printed at T.T.D. Press by **Sri R.V.Vijaykumar,** B.A., B.Ed., **Dy.E.O.,** (Publications & Press), T.T.D. Press, Tirupati-517 507.

आंध्रप्रदेश के नूतन राज्यपाल श्रध्देय श्री बिश्वभूषण हरिचंदन ने शपथ लेने के पूर्व दिन २३-०७-२०१९ को तिरुचानूर श्री पद्मावती देवी का, तिरुमल श्री वराहस्वामी का तथा श्री वेंकटेश्वरस्वामी का दर्शन किया।

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

ति.ति.दे. के नवीन विशेष अधिकारी, तिरुमल श्री ए.वी.धर्मारेड्डी से १९-०७-२०१९ को तिरुमल मंदिर में ति.ति.दे. के तिरुपति संयुक्त कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी.बसंत कुमार, आई.ए.एस., ने शपथ करवाया।

ति.ति.दे. श्री वेंकटेश्वर भक्ति छॉनल के अध्यक्ष एवं निदेशक श्री पृथ्वीराज बालिरेड्डी ने २८-०७-२०१९ को पदभार संभालने का शपथ लिया।

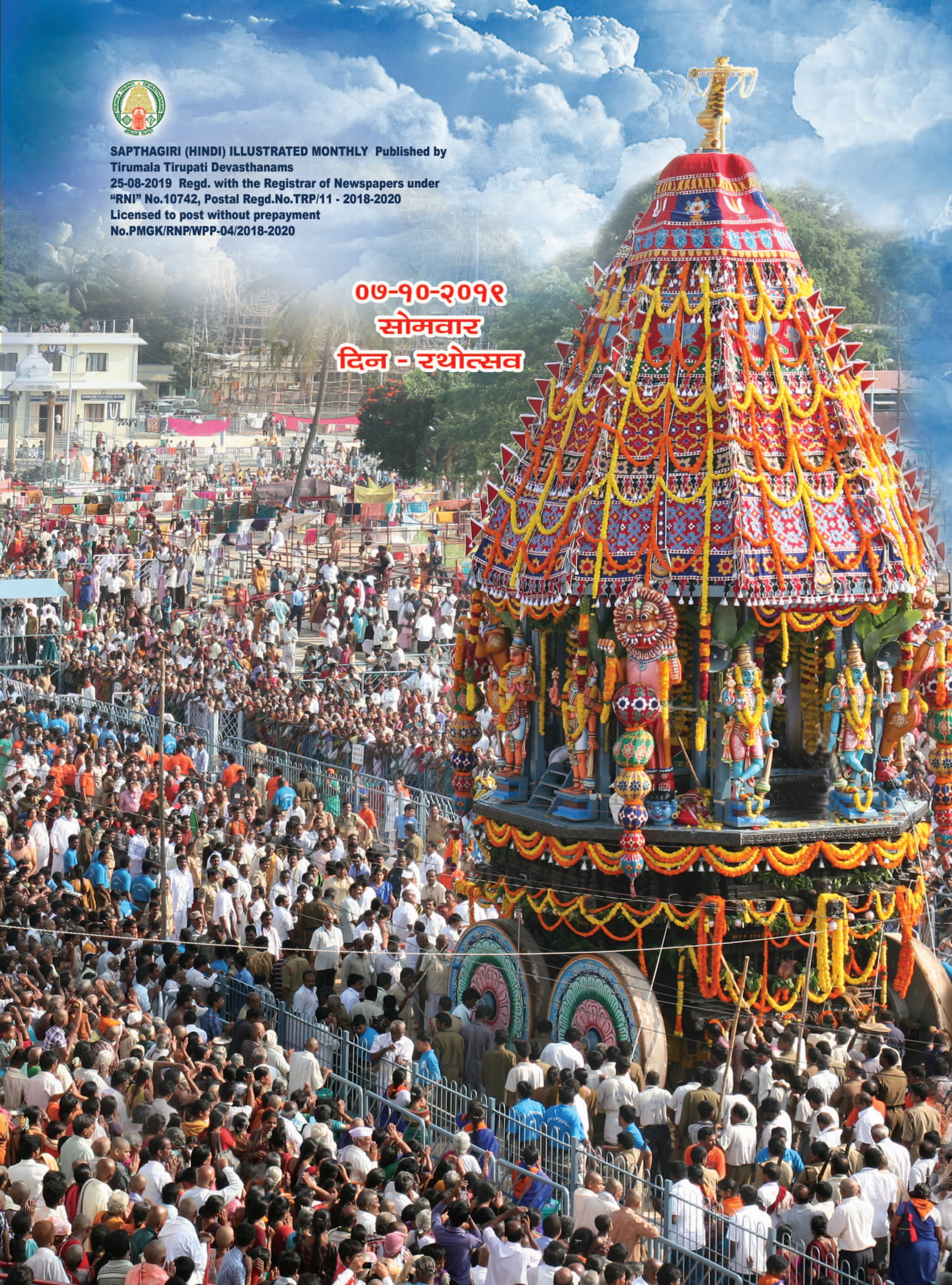

SAPTHAGIRI (HINDI) ILLUSTRATED MONTHLY Published by
Tirumala Tirupati Devasthanams
25-08-2019 Regd. with the Registrar of Newspapers under
"RNI" No.10742, Postal Regd.No.TRP/11 - 2018-2020
Licensed to post without prepayment
No.PMGK/RNP/WPP-04/2018-2020

०७-१०-२०१९
सोमवार
दिन - रथोत्सव